वैश्विक संवाद GLOBAL DIALOGUE

2.2

सूचना पत्र

International Sociological Association

इस्लामोफोबिया पर वार्तालाप

कैथेरीन डेलक्रोइक्स

इस्लाम का नया लोकलुभावनवाद

वैडी आर. हैड्रिज

जलवायु परिवर्तन की बाधित वार्ताओं का दोषी कौन?

हरबर्ट डोकेना

परिचर्चा: एक असमान विश्व में समाजशास्त्र

पिओटर स्टोम्पका
टीना उइस
निकिता पोकरोवस्की
फर्नान्डा बीगल
हेल्गा नोवोट्नी

अंक 2 / क्रमांक 2 / नवम्बर 2011

- वैश्विक श्रम के लिए सम्भावनाएं क्या हैं?
- इजरायल में एक जमीनी नागरिक समाज
- चैचेन्या: जहाँ युद्ध की समाप्ति का अभिप्राय शान्ति नहीं है
- एल.ए.एस.ए.: निर्णायक घोषणापत्र
- ई.एस.ए.: अशांत समय के लिए समाजशास्त्र
- आई.एस.आर.बी.: अलविदा देवोरा – स्वागत मोहम्मद

GDN

> सम्पादकीय

समाजशास्त्र का एक महत्वपूर्ण कार्य लोकप्रिय रुढीवादिता और राजनैतिक विकृतियों का विरोध करना है जो कि, कम से कम, आज के विश्व में इस्लाम के स्थान को चित्रित करती हैं। इस प्रकार वैश्विक वार्ता के इस अंक में कैथेरीन डेलक्रोइक्स विशलेषण करती है कि यूरोपीय मुस्लिम समुदाय किस प्रकार इस्लामोफोबिया पर प्रतिक्रिया व्यक्त करता है जबकि वैडी हैड्रिज पडताल करती है कि टर्की का न्याय और विकास दल जिसका कि अब टर्की में शासन है किस प्रकार इस्लामिक लोकलुभावनवाद बाजार की विचार–धाराओं के लिए इण्डोनेशिया और मिश्र के मुसलमानों को लामबन्द करता हैं।

हरबंट डोकेना दर्शाते हैं कि किस प्रकार जलवायु परिवर्तन वार्ता में बाजार और नैतिकता भी आपस में गुंथे हुए हैं जबकि उत्तर अपने सदियों के उत्सर्जन के अपराध से इन्कार करता है, दक्षिण उन हालातों के लिए जिसे उसने नहीं बनाया के लिए बलिदान देने से मना कर रहा है। बाजार यहां कथित रुप से एक तटस्थ मध्यस्थ बन कर प्रवेश करता है जबकि अन्य मामलों में विध्वंसकता पारदर्शी है। इसी प्रकार रॉब लेम्बर्ट लिखते हैं कि वैश्विक दक्षिण में नवउदारवाद की अंतरराष्ट्रीय श्रमिक एकता पर आधारित होड़ की क्या संभावनाऐं हैं जबकि देवोरा कालेकिन पिछली गर्मियों में इजरायल के कठोर नियमों के विरुद्ध प्रदर्शन का वर्णन करती हैं।

बाजार कट्टरवाद भी दो प्रमुख लेखों में जो इस बार प्रकाशित हुए हैं में केन्द्रित रहा – यूरोपियन सोशियोलोजिकल एसोशिएशन की सितंबर की बैठक और लैटिन अमेरिकन सोशियोलोजिकल एसोशिएशन की बैठक में। उनका योगदान असमान विश्व में समाजशास्त्र पर है – जो कि 2014 की योकोहामा में आयोजित होने वाली समाजशास्त्र की विश्व कॉग्रेस का विषय भी है – जैसा कि पियोटर स्टोम्पका के परिप्रेक्ष्य से जिनकी दस स्थापनाओं ने चार भिन्न प्रतिक्रियाएं बतलाई है। बहस नयी नहीं है परन्तु वैश्विक असमानता की बढ़ती हुई चेतना को स्फूर्ती देती है।

हमरा मानवाधिकार स्तम्भ चैचेन्या में पैक्स–रशियन की भयावहता का वर्णन करता है, जबकि हमारे इतिहास के स्तम्भ में देवोरा कालेकिन, इण्टरनेशनल सोशियोलाजी रिव्यू आफ बुक्स जो कि 2006 में आरम्भ हुआ था, की समर्पित संपादक की प्रशस्ति की गयी है। अन्त में मैं वारसा के समाजशास्त्रियों के दल का स्वागत करना चाहूँगा जो कि वैश्विक वार्ता के पोलिस अंक को प्रस्तुत करेंगें जो कि हमारी 12वीं भाषा होगी और बोगोटा के उस दल का भी जो स्पेनिश भाषा में अनुवाद को देखेगा।

> इस अंक में In This Issue

सम्पादकीय **2**

> इस्लाम

इस्लामोफोबिया पर वार्तालाप : निकास, आवाज एवं निष्ठा
कैथेरीन डेलक्रोइक्स, फ्रांस **3**

इस्लाम का नया लोकलुभावनवाद
वैडी आर. हैड्रिज, आस्ट्रेलिया **6**

> सामाजिक विरोध

दोषी कौन हैं ? जलवायु परिवर्तन पर वार्ताओं का तूफानी दौर
हरबंट डोकेना, फिलीपीन्स **8**

वैश्विक श्रम के लिए सम्भावनाएं क्या हैं?
राबर्ट लेम्बर्ट, आस्ट्रेलिया **10**

आत्मखोज : इजरायल में एक जमीनी नागरिक समाज
देवोरा कालेकिन–फिशमैन, इजरायल **12**

> वार्ता: एक असमान विश्व में समाजशास्त्र

एक असमान विश्व में समाजशास्त्र की प्रस्थिति से सम्बन्धित दस स्थापनाएँ
पिओटर स्टोम्पका, पोलैण्ड **14**

उत्कृष्टता एवं सन्तुलन : अर्थपूर्ण एवं महत्ववान समाजशास्त्र की रचना
टीना उइस, दक्षिण अफ्रीका **16**

रोगी को अस्पताल में भर्ती करने से इन्कार' अथवा 'समाजशास्त्र की रक्षा में'
निकिता पोकरोवस्की, रुस **18**

अकादमिक आश्रितता
फर्नान्डा बीगल, अर्जेन्टीना **19**

आज के असमान विश्व में समाजशास्त्र की रचना एवं प्रस्तुतीकरण
हेल्गा नोवोट्नी, आस्ट्रिया **21**

> विशेष स्तम्भ

मानवाधिकार: युद्ध की समाप्ति का अभिप्राय शान्ति नहीं है
एलिस स्केजीपेनिकोवा, जर्मनी **23**

निर्णायक घोषणापत्र: लैटिन अमेरिकन सोशियोलॉजिकल एसोसिऐशन
रॉकेल सोसा एलीज़ागा, मैक्सिको **25**

अशांत समय के लिए समाजशास्त्र : यूरोपियन समाजशास्त्रीय संघ में दिया गया भाषण
एनालिया टोरेस, पुर्तगाल **27**

आई.एस.ए. के सम्पादक: अलविदा देवोरा – स्वागत मौहम्मद
जैनीफर प्लाट, इंग्लैण्ड के द्वारा लिया गया साक्षात्कार **29**

> Editorial Board

– Editor: Michael Burawoy. **– Managing Editors:** Lola Busuttil,August Bagà. **–Associate Editors:** MargaretAbraham, Tina Uys, Raquel Sosa, Jennifer Platt, Robert Van Krieken. **– Consulting Editors:** Izabela Barlinska, Louis Chauvel, Dilek Cindoglu, Tom Dwyer, Jan Fritz, Sari Hanafi, Jaime Jiménez, Habibul Khondker, Simon Mapadimeng, Ishwar Modi, Nikita Pokrovsky, Emma Porio, Yoshimichi Sato, Vineeta Sinha, Benjamin Tejerina, Chin-Chun Yi, Elena Zdravomyslova. **– REGIONAL EDITORS –Arab World:** Sari Hanafi, Mounir Saidani. **Brazil:** Gustavo Taniguti, Juliana Tonche, Pedro Mancini, Fabio Silva Tsunoda, Dmitri Cerboncini Fernandes,Andreza Galli, Renata Barreto Preturlan. **Colombia:** María José Álvarez Rivadulla, Sebastián Villamizar Santamaría,Andrés CastroAraújo. **India:** Ishwar Modi, Rajiv Gupta, Rashmi Jain, Uday Singh. **Iran:** Reyhaneh Javadi, Shahrad Shahvand, Zeinab Nesar, Fatemeh Khorasani, Najmeh Taheri, Saghar Bozorgi, TaraAsgari Laleh. **Japan:** Kazuhisa Nishihara, Mari Shiba, Yoshiya Shiotani, Kousuke Himeno, Tomohiro Takami, Yutaka Iwadate, Kazuhiro Ikeda, Yu Fukuda, Michiko Sambe, Takako Sato. **Poland:** Mikołaj Mierzejewski,Anna Piekutowska, Karolina Mikołajewska, Jakub Rozenbaum, Tomasz Piątek, Michał Chełmiński. **Russia:** Elena Zdravomyslova, Elena Nikoforova,Asja Voronkova. **Spain:** Gisela Redondo. **Taiwan:** Jing-Mao Ho. **– Media Consultants:**Annie Lin, José Reguera.

> इस्लामोफोबिया पर वार्तालाप : निकास, आवाज एवं निष्ठा

कैथरीन डेलक्रोइक्स, स्ट्रॉसबर्ग विश्वविद्यालय, फ्राँस

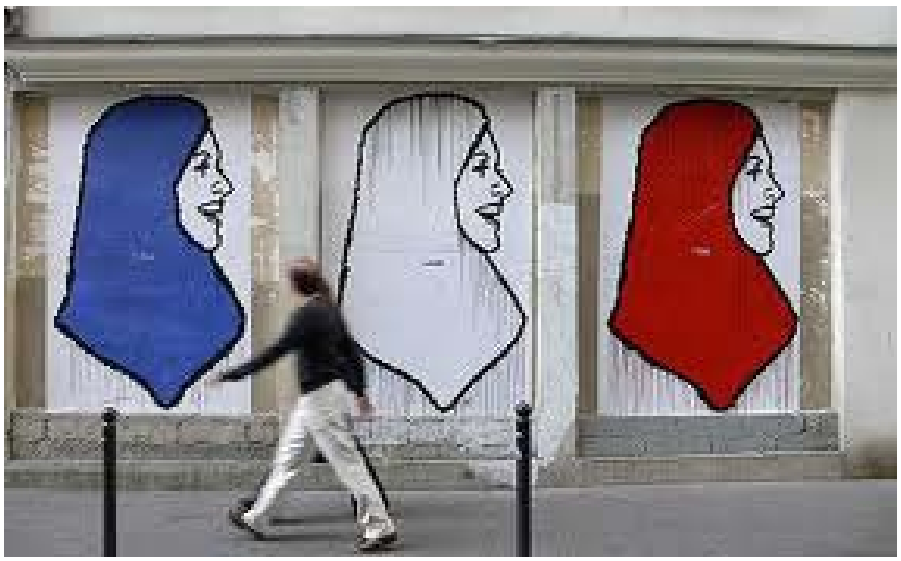

गली की कला में मुस्लिम महिलाओं को बुर्का पहने दिखाते हुए तथा साथ ही प्रतिब) फ्रेंच नागरिक के रुप में

यूरोप में कुछ समय से इस्लामोफोबिया उभार पर है। कुछ समय पहले मैं ब्रुसेल्स में विभिन्न यूरोपीय देशों से, यूरोप में नागरिकता के मुद्दे पर कार्य करने वाले, समाजशास्त्रियों की एक वैज्ञानिक कार्यशाला में भाग ले रही थी। यूरोपीय संसद के एक प्रख्यात सदस्य, जिन्होंने यूरोपीय संविधान को ड्राफ्ट करने में सहयोग दिया था, ने घोषित किया कि ''हम यूरोपीयन, हिंसात्मक धर्म रूपी इस्लाम को स्वीकार नहीं कर सकते और जो हमारी यूरोपीय पहचान जो कि ईसाई हैं, पर प्रश्न करता है। मुस्लिम प्रवासी एवं उनके बच्चों को यदि यूरोप में रहना है और यूरोपीयन की तरह पहचाना जाना है तो उन्हें अपने मूल्य एवं धार्मिक विश्वास को छोड़ना होगा।'' हम में से अधिकांश अचंभित हो गये। इस राजनितिज्ञ के देश के ही एक सहयोगी ने उनसे पूछा, ''क्या आप सोचते हैं कि आपकी यह राय अल्पसंख्यक अधिकार जो कि लोकतंत्र के लिए आवश्यक है, से मेल खाती है? उन्होंने उत्तर दिया : यूरोपीयन व्यवस्था बनाये रखना सर्वाधिक महत्वपूर्ण प्राथमिकता है। यह अल्पसंख्यक अधिकारों के प्रति आदर और लोकतंत्र से भी अधिक महत्वपूर्ण है।

इस्लामोफोबिया वास्तव में बहुत प्राचीन है। अल्जीरिया के फ्रांसीसी उपनिवेश में पूर्वाग्रह नकरात्मक छवि का इस्तेमाल कर उपनिवेशियों को उनकी सम्पत्ति व नागरिक अधिकारों से वंचित किया गया। देक्रेत क्रेमियूक्स (decret Cremieux, 1870) के अनुसार वे मुस्लिम धर्म को त्याग कर फ्रेंच नागरिक बन अपने नागरिक अधिकार प्राप्त कर सकते थे। परन्तु ऐसा बहुत ही कम लोगों ने किया। यदि उन्होंने ऐसा नहीं किया तो वे अपने अधिकार एवं स्वतन्त्रता को खो देते हैं और उपनिवेशवादियों का शिकार बन जाते हैं।

उत्तर अफ्रीका एवं अन्य जगहों पर स्वतन्त्रता संग्रामों ने खेल को ही बदल दिया। पाकिस्तानी, बंगलादेशी और भारतीय ब्रिटेन में, तथा इण्डोनेशियन, मोरोक्कन एवं तुर्कों ने नैदरलेण्ड एवं बेल्जियम में, वैसे ही अल्जिरियन, मोरोक्कन एवं टयूनिशियन ने फ्रांस में पहले (अस्थायी) श्रम शक्ति के रुप में जाने जाते थे या फिर अतिथि श्रमिक के रुप में जैसा कि वे पड़ोसी देशों में पुकारे जाते थे। फिर उन्हें अपनी पत्नी और बच्चों को लाने की अनुमति प्राप्त हो गई परन्तु वर्ग आयाम हमेशा

> >

से मौजूद रहा। हालांकि अब इसने नृजातीय (चमड़ी का रंग) का आयाम ले लिया है। आज कल उनके पोते–पोती यूरोपीय नागरिकता का दावा करते हैं परन्तु उन्हें अपने 'धर्म' या फिर 'मूल' के साथ जुड़े हुए कलंक का सामना करना पड़ता है।

व्यापक नस्लवाद एवं इस्लामोफोबिया से मुखातिब यूरोपीय (फ्रेंच) मुस्लिम किस तरह प्रतिकार करते हैं? कोई भी इसका सही उत्तर नहीं जानता। कुछ क्षेत्रीय अध्ययनों के माध्यम से ही हमें सन्निकट (लगभग) उत्तर मिल सकता है। पिछले 20 वर्षों से मैं फ्रांस में रहने वाले मुस्लिम प्रवासी परिवारों का गहन एकल पद्धति द्वारा अध्ययन कर रही हूँ। मेरे अध्ययन का फोकस विशेषतः इस मुद्दे पर है कि मगरेब के कार्यशील परिवार अपने बच्चों को भेदभाव से सामना करने के लिए किस तरह से तैयार करते हैं? मैंने परिवार इतिहास के पुनः निर्माण के आधार पर एक पद्धतिशास्त्रीय उपागम का उपयोग किया है। यह पुनः निर्माण प्रत्येक परिवार के कई सदस्यों : माता–पिता और बच्चों के जीवन इतिहास साक्षात्कार से तैयार हुआ है। मैंने इन एकल अध्ययनों को फ्रांस के कई विभिन्न क्षेत्रों और नगरों में दोहराया है।

आज तक किसी ने भी एक ऐसे प्रारूप को प्रस्तावित नहीं किया है जो भेदभाव का अनुभव कर रही जनसंख्या की उस प्रतिक्रिया की विस्तार से प्रस्तुति कर सके जो भेदभाव को व्यक्त करती हो। ऐसे प्रारूप के न होने के कारण 1920 के दशक में यूरोप के यहूदियों ने जिस भेदभाव को झेला और वर्तमान दौर में मुसलमान जिस भेदभाव को झेल रहे हैं को जाना नहीं जा सकता है। इस संदर्भ में मैंने अल्बर्ट हर्शमैन की विख्यात टाइपोलोजी : निकास, आवाज एवं निष्ठा को अपना लिया है। अर्थशास्त्री हर्शमैन अप्रकार्यात्मक राज्य की नौकरशाही का सामना कर रहे व्यक्तियों की व्यक्तिगत प्रतिक्रियाओं के विस्तार का उल्लेख कर रहे थे–उदाहरण के लिए बुरे प्रबंधन वाली राज्य एकाधिकार की रेल व्यवस्था। हर्शमैन का तर्क था कि इस परिस्थिति की सभी प्रतिक्रियाएँ तीनों में से किसी एक श्रेणी में आती हैं–निकास, आवाज या निष्ठा। यात्री या तो ट्रेन से यात्रा करने की उच्च लागत को स्वीकार कर सकते हैं (निष्ठा), शिकायतों द्वारा प्रतिरोध कर सकते हैं (आवाज) या फिर रेलयात्रा छोड़कर कार से यात्रा कर सकते है (निकास)

अब ऐसा लगता है कि यह टाइपोलोजी नस्लवाद का सामना कर रहे व्यक्तियों की प्रतिक्रियाओं पर सही लागू होती है। वे या तो प्रतिरोध कर सकते हैं (आवाज), जो 1930 के दशक में अपेक्षाकृत कम यहूदियों ने किया और आज भी बहुत कम मुस्लिम करते हैं। वे इस उम्मीद में निष्क्रिय रह सकते हैं कि यह तूफान कम हो जायेगा जैसा कि जर्मनी और फ्रांस के कई एकीकृत यहूदियों ने किया। यह 'निष्ठा' है जिसका उनके प्रकरण में अंत दुखदायी रहा। या फिर वे देश छोडने का निर्णय ले सकते हैं, जो कि निकास है।

> निकास

हम निकास से शुरू करते है। फ्रांस में कई युवा जिन्हें कोई काम नहीं मिलता अपना भाग्य मॉट्रियल में आजमाते हैं। कनाड़ा अभी भी नये कुशल प्रवासियों को स्वीकारता है। अधिकतर सभी यही अनुभव करते हैं, जिसे एक ने इस तरह व्यक्त किया : फ्रांस में मुझे अपनी अरब पहचान, मोरोक्को से आये मेरे पिता के नाम, के कारण कार्य नहीं मिला। मॉट्रियल में जैसे अचानक मैं अरब के रूप में दिखना बंद हो गया। कनाड़ाई के लिए मैं सिर्फ फ्रांसीसी आरै सिर्फ फ्रांसीसी ही था। फिर वे मुझसे मेरी दक्षता के बारे में पूछते हैं ..... यह बहुत खुशगवार था। फ्रांस में मैं ऐसा ही चाहता था; अन्य लोगों की तरह होना–फ्रेंचमेन। मैंने बहुत मेहनत की, बहुत कोशिक की परन्तु लोग मेंरे 'मूल' और धर्म के प्रश्न पर बारंबार लौट आते थे।

अतः नस्लवाद से भागने का एक उम्दा तरीका प्रवास है। ऐसे फ्रेंच युवा ऑस्ट्रेलिया और अरब के खाड़ी देशों में देशांतरण कर जाते हैं। हालांकि सबको ऐसे अवसर प्राप्त नहीं होते और निकास के कुछ अन्य कम खुशगवार तरीके भी हैं। यह सर्व विदित है कि नस्लवाद से स्वत्व, आत्मधारणा, आत्मविश्वास को क्षति पहुंचती है, विशेषतः उन व्यक्तियों को जो कि पृथक और कम लचीले हैं। कुछ नशीले पदार्थों का सेवन या फिर आत्महत्या कर सकते हैं जो कि 'निकास' के प्रकार भी हैं।

> आवाज

आवाज इसकी तुलना में विपरीत दिशा में जाती है। अनुचित सामाजिक व्यवस्था में स्वयं के साथ हो रहे भेदभाव पूर्ण व्यवहार का प्रतिरोध करना 'आवाज उठाना' है। यह व्यक्तिगत या सामूहिक हो सकता है। 'आवाज' मान्यता माँगती है यह मान्यता के लिए संघर्ष है : ''हे समाज! मैं भी तुम्हारा सदस्य हूँ। मुझे इस तरह से मानो! और मेरे अल्पसंख्यक अधिकारों को भी मान्यता दो! अपने घोषित आदर्शों को जियो।''

फ्रांस में भेदभाव का सामना कर रहे समूहों द्वारा आवाज उठाने के कई उदाहरण है, कुछ औपचारिक एवं संगठित, अन्य अनौपचारिक और अल्पकालीन, जैसे नवम्बर 2005 में पुलिस से भागने की कोशिश करते हुए एक युवा आदमी की हत्या से भड़के सरहद (banlieues) पर दंगे। 'निकास' के विपरीत, पुलिस हिंसा के विरूद्ध प्रतिरोध करना, फ्रांस को अपने 'स्वतन्त्रता, समानता और भाईचारे' के आदर्शों पर कायम रहने को कहने का मतलब फ्रेंच समाज को खारिज कर देना नहीं है जैसा कई लोग विश्वास करते हैं। बिल्कुल इसके विपरीत है। इसका मतलब है कि भेदभाव पीड़ित अभी भी समाज की स्वयं को सुधारने की क्षमता में विश्वास रखते हैं।

नस्लवाद के तीन मुख्य प्रत्युत्तर में से, आवाज ही वह है जो व्यक्तिगत से सामूहिक प्रत्युत्तर–लघु प्रक्रियाओं से स्थानीय, प्रादेशिक और यहाँ तक राष्ट्रीय स्तर तक जाने की संभावनाएँ खोलती है। पर यह रास्ता इतना आसान नहीं है क्योंकि सामाजिक व्यवस्था हमेशा विरोध करती है और हर बार दबाब से नहीं। वह इससे अधिक चतुर है; इसके अधिक काम में आने वाले हथियार असंबद्ध (discursive) हैं–तथ्यों एवं विरोधियों के इरादों को विकृत करने के चतुर तरीके।

मुझे मुस्लिम स्कार्फ का उदाहरण लेने दें। मुस्लिम माता–पिता की लड़कियाँ और युवा फ्रेंच महिलाएँ स्कार्फ पहनने का निर्णय क्यों लेती हैं? क्या ऐसा कट्टरपंथियों के दबाब के कारण हैं? जब समाजशास्त्रियों ने उच्च विद्यालय में स्कार्फ पहनने वाली लड़कियों का साक्षात्कार किया तो उन्हें पता चला कि ऐसा नहीं है। अधिकतर लड़कियों ने कहा कि उन्होंने यह निर्णय स्वयं लिया है; अक्सर अपने माता–पिता की इच्छा के विरूद्ध। शुरूआत में किसी ने उनका विश्वास नहीं किया, सबसे सोचा कि वे झूठ बोल रही हैं। परन्तु कालांतर में यह स्पष्ट हो गया कि वे वास्तव में सच बोल रही थीं। उन्होंने यह भी कहा कि इसका मतलब यह नहीं है कि वे कम फ्रेंच महसूस करती हैं, बल्कि ऐसा बिल्कुल नहीं है।

'स्कार्फ' प्रघटना की सर्वश्रेष्ठ व्याख्या होरिया बाउतेल्जा ने द्वितीय पीढ़ी की फ्रेंच मुस्लिम महिलाओं के समक्ष विरोधाभासी परिस्थिति को इंगित करते हुए दी है। एक तरफ अरबों के खिलाफ नस्लवाद, बढ़ता हुआ इस्लामोफोबिया और श्रम बाजार में भेदभाव है। परन्तु युवा महिलाओं की अपेक्षा उनके भाइयों पर दबाब अधिक बलशाली है। श्वेत समाज इन लड़कियों को यह संदेश देता है कि : ''अपने बचपन के स्थान को छोड़ दो; पिता और भाइयों की सत्ता से भाग जाओ; उन्हें पीछे छोड़ दो। अपने पिछले जीवन को

>>

छोड़ खुले फ्रेंच समाज की सदस्यता ग्रहण करो।''

होरिया बाउतेल्जा के अनुसार इन लड़कियों के लिए स्वतन्त्रता का प्रलोभन काफी बड़ा प्रलोभन है। वास्तव में मगरेब के प्रवासी परिवारों में अभी भी पितृसत्तात्मक संस्कृति, प्रतिमान और निषेधों के अंश विद्यमान हैं। परन्तु यह अपने परिवार और समुदाय के साथ विश्वासघात होगा। होरिया बाउतेल्जा के अनुसार यह एक जाल है परन्तु इस जाल से निकलने का हल उन्होंने स्कार्फ पहनने के रूप में निकाल लिया है। इसे पहनने से युवा महिलाएँ फ्रेंच समाज को चुपके से कह रही हैं : नहीं, हम अपने माता–पिता और समुदाय के साथ विश्वासघात नहीं करेंगे। तुम उनके साथ दुर्व्यवहार करते रहे हो, पहले मेहमान कामगार के रूप में और अब मुस्लिम के रूप में; निश्चय तौर पर हम उनकी तरफ ही रहेंगे।''

लेकिन उसके साथ ही, होरिया बाउतेल्जा के अनुसार स्कार्फ उनके अपने समुदाय के पुरूष : पिता और भाईयों को भी एक संदेश भेजता है। वह संदेश है : ''देखों, हमने तुम्हारे साथ विश्वासघात नहीं किया, हम तुम्हारा समर्थन कर रहे हैं; हमने उनका प्रस्ताव ठुकरा दिया है, हाँ? कृपया कर अब हमें अपने रास्ते जाने के लिए स्वतन्त्र छोड़ दीजिए। हम अनुचित आचरण नहीं करेंगे; परन्तु हमें आगे पढ़ने की स्वतन्त्रता चाहिए; हम अनजान व्यक्ति से विवाह करने की तुलना में अकेला रहना पसंद करेंगे; हम अपने पेशेवर जीवन के लिए तैयार होना चाहते हैं।'' यह निकास नहीं है; न ही यह निष्ठा है (फ्रेंच समाज की तरफ); यह आवाज का स्पष्ट अपितु परिष्कृत उदाहरण है।

> निष्ठा

फिर निष्ठा का क्या अर्थ है? ऐसा समाज जो आपको भिन्नता के आधार पर अस्वीकार कर देता है उसके प्रति निष्ठा रखना कठिन है। लेकिन नस्लवादी समाज के प्रति फिर भी इस प्रकार की निष्ठा प्रवासियों की पहली पीढ़ी में, अल्जिरियन स्वतन्त्रता संग्राम के बावजूद पाई जाती है। अतः 2005 में क्लाडीन एटियास –डॉनफुट द्वारा निर्देशित फ्रांस में सभी मूल के बुजुर्ग प्रवासियों के एक राष्ट्रीय सर्वे में पाया गया कि 90% प्रतिशत व्यक्ति फ्रांस में चैन से रह रहे हैं।

इसके अतिरिक्त मैंने भी कई प्रवासी माता–पिता को अपने बच्चों को अपमानजनक टिप्पणियों के समक्ष प्रतिकार नहीं करने के लिए समझाते हुए देखा है। यह अपने बच्चों के भविष्य के अवसरों को बढ़ाने के लिये धैर्य रखने की एक रणनीति थी। द्वितीय पीढ़ी के युवाओं में हालांकि निष्ठा की एक अंतर्राष्ट्रीय अवधारणा थी : वे फ्रेंच गणराज्य के मूल्यों में विश्वास करते हैं और अपने आप को यूरोपीय नागरिक के रूप में परिभाषित करते हैं। अधिकतर उनकी अपनत्व की भावना इस बात से जुड़ी है कि उनके परिवार के सदस्य कई यूरोपीय देशों में रहते हैं। वे यूरोपीय लोकतंत्र और अल्पसंख्यक अधिकारों की रक्षा में विश्वास रखते हैं।

संबद्ध होना या न होना, यह महत्वपूर्ण प्रश्न है परन्तु संबद्ध होने के लिए भी दो व्यक्ति की आवश्यकता होती है। इस्लामोफोबिया उस पहचान के विरूद्ध है, जो संबद्ध होने और यह महसूस करने के लिए कि हम संबद्ध है के लिए आवश्यक है। मैं फ्लोया अन्थियास के कथन से अंत करती हूँ : ''अपनत्व, औपचारिक और अनौपचारिक, दोनों से सम्बन्धित है। अपनत्व/संबद्ध का अर्थ सदस्यता, अधिकार एवं कर्तव्य जैसा नागरिकता के मुद्दे पर है या फिर समूहों या अन्य के साथ पहचान के स्वरूपों के रूप में ही नहीं हैं। अपितु यह उन सामाजिक स्थानों के बारे में भी है जो ऐसी पहचान और सदस्यता से निर्मित होते हैं और वे तरीके जिनके द्वारा सामाजिक स्थान स्वत्व की स्थिरता, वृहदता का हिस्सा होने की भावना एवं ऐसे स्थानों से जुड़े भावनात्मक और सामाजिक बंधन को प्रभावित करते है।''

यह इस मुद्दे की मुख्य बात है। मेरा मानना है कि समाजशास्त्री होने के नाते हमारे पास वो साधन है– उदाहरणार्थ एकल पद्ध ति, जीवन इतिहास से उद्धरण, जिनके द्वारा यूरोपीय सामान्य बोध को संशोधित किया जा सकता है ताकि यूरोपीय मुस्लिमों को बलि का बकरा बनाना बंद कर अपने आप का हिस्सा समझ जाऐं। ■

References

Anthias, F. (2002) "Thinking through the lens of Trans-national Positionality," www.imrstr.dcu.ie [4:1].

Attias-Donfut, C. (2006) *L'enracinement. Enquête sur le vieillissement des immigrés en France.* Paris:Armand Colin.

Boutelja, H. (2006) "On vous a tant aimé-es." Entre-tien réalisé par Christelle Hamel et Christine Delphy. *Nouvelles Questions Féministes* 25(1).

Delcroix, C. (2009) "Muslim Families in France: Crea-tive Parenting, Identity and Recognition." *Oral History* 37(2).

Hirschman,A. (1972) *Exit, Voice and Loyalty: Respons-es to Decline in Firms, Organizations and States*. Cam-bridge: Harvard University Press.

> नवीन इस्लामिक लोकलुभावनवाद

वैडी आर. हैड्ज, मुरडोक विश्वविद्यालय, ऑस्ट्रेलिया

टर्की के चमत्कारी प्रधानमंत्री रेसैप ताईप एरडोगन इस्लाम तथा नवउदारवाद के सम्मिश्रण के लिए लोकप्रिय समर्थन प्राप्त करते हुए।

हाल ही में हुई अरेबियन विद्रोह की सबसे ध्यानाकर्षी विशेषता यह है कि इस्लामिक विरोधी आंदोलन इसमें अग्रणी नहीं रहे हैं। उन्होंने नेतृत्व नहीं किया, यह इसलिए रोचक है क्योंकि शीत युद्ध के दौरान मुस्लिम समाजों में वामपंथ के अंत के बाद से इस्लामिक समूह कई अधिकारिक शासनों, विशेषतः उत्तर अफ्रीका एवं मध्य पूर्व में, के विरूद्ध असंतोष के स्त्रोत रहे हैं। तथापि, ट्यूनिशिया और मिस्र जैसे देशों में अल नाहदा और मुस्लिम ब्रदरहुड के क्रमशः नये उत्तर–आधिकारिक वातावरण में अच्छा करने की संभावना है। इसने कुछ हद तक पश्चिमी मीडिया के कुछ क्षेत्रों में चेतावनी और इस्लोमोफोबिक अत्युक्ति को पैदा किया है।

अधिक गहनता से देखने से पता चलता है कि नये इस्लामिक लोकलुभावनवाद से इस्लामिक राजनीति अक्सर परिवर्तित होती रहती है। यदि पुरानी व्यवस्था नगरीय व्यापारी, छोटे उत्पादक एवं ग्रामीण अभिजन जैसे परम्परागत लघु मध्यमवर्गी (पेटी बुर्जुआ) के हितों पर आधारित थी तो नये इस्लामिक लोकलुभावनवाद का गठन उच्च कोटि के भिन्न तत्वों, हाशिये पर आये मध्यवर्गों, सामाजिक संस्करण के निचले पायदान पर फँसे नवीन नगरीय माध्यम वर्ग के महत्वाकांक्षी और शिक्षित सदस्यों, और साथ ही फैलती और अराजक काइरो, इस्तानबुल एवं जर्काता जैसी मेगासिटी में कुछ दशकों में आने वाले नगरीय गरीब, जो शिक्षा, नौकरी और अच्छे भविष्य ही आशा में आये थे, से होता है। इन दोनों ही स्वरूपों में, हालाँकि उम्माह (ummah) को लोगों की जगह स्थापित किया गया है – एक अवधारणा जो लोकलुभावनी कल्पना में लालची हिंसक अभिजात वर्ग के स्थान पर नैतिक रूप से पवित्र परन्तु हाशिये पर जनसमूह को देखती है।

ऐसे बदलाव का प्रभाव मुस्लिम ब्रदरहुड जैसे संगठन, जो अपने आंतरिक विरोधाभासों के बावजूद, अभी भी मिस्र नागरिक समाज की सबसे संगठित शक्ति है, पर व्यापक रहा है। हालाँकि, 2002 में जस्टिस एण्ड डेवलपमेण्ट पार्टी (AKP) के टर्की में सत्ता में आ जाने से नवीन लोकलुभावनवाद का प्रभाव दिख रहा था। मुस्लिम ब्रदरहुल की नई चुनावी पार्टी इजिप्शियन फ्रीडम एण्ड जस्टि पार्टी के नेता इसे एक आदर्श प्रारूप के रूप में देख रहे हैं। सूदूर दक्षिण–पूर्व एशिया में भी, इस्लामिक अभिमुखन वाली पार्टियों में सबसे सफल, इंडोनेशिया की जस्टिस एण्ड प्रास्पेरिटी पार्टी (PKS) ने वर्षों से IKP की

>>

सफलता से प्रेरणा ली है। हाल ही में PKS ने लगातार तीसरा साधारण चुनाव जीता है। लोकतंत्र को अपनाने के अलावा IKP ने बड़ी चतुराई से इस्लामिक लोकलुभावनवाद की सामाजिक न्याय की चिंता पर नवउदारवाद प्रेरित आर्थिक सुधार को रोपित किया है।

AKP अनुभव को चुनावी लोकतंत्र में भागेदारी के अन्तर्निहित मर्यादित प्रभाव के रूप में नहीं देखा जा सकता, जैसा कुछ लोगों का सुझाव है। अधिक महत्वपूर्ण बात यह है कि उम्माह की सामाजिक, आर्थिक एवं राजनैतिक स्थिति को मजबूत करने के लिए आवश्यक रूप से इस्लामिक राज्य या फिर शरीयत द्वारा शासित राज्य की आवश्यकता नहीं है। यह उम्माह और उसके राजनैतिक और संगठनात्मक संगठन को वर्तमान राज्य और बाजार के अनुकूल पुनः स्थापन के द्वारा प्राप्त किया जा सकता है।

नगरीय गरीब के जमीनी सहयोग और नगरीय शिक्षित मध्यम वर्ग के महत्वाकांक्षी सदस्यों के नेतृत्व के बावजूद IKP की सफलता का एक महत्वपूर्ण कारण अनाटोलियन बुर्जुआ का सहयोग रहा है। यह इस्तानबुल के बड़े बुर्जुआ के पक्षकार केमलिस्ट (Kemalist) निरपेक्ष, नौकरशाही और राजनैतिक व्यवस्था से अपेक्षाकृत किनारे पर आये सुसंस्कृत मुस्लिम व्यापारियों से निर्मित है।

टर्की के 1980 के दशक से वैश्विक बाजार आधारित आर्थिक रणनीति अपनाने के बाद से प्रादेशिक अनाटोलियन बुर्जुआ धन और शक्ति में बढ़ रहे हैं। हालाँकि टर्की के सन्दर्भ में इस्लामिक राज्य के विरूद्ध आंदोलन करना असंवैधानिक है और IKP खुले रूप में स्वयं को एक इस्लामिक पार्टी के रूप में प्रस्तुत नहीं कर सकती। इस बात के बावजूद कि वह दीर्घकाल से स्थापित इस्लामिक समूहों और नेटवर्क के दायरे से बाहर आ गई है। हालाँकि इसने विपरीत–वर्ग साझेदारी के विकास में कोई बाधा नहीं डाली है। ये साझेदारियाँ न सिर्फ जीती हैं बल्कि इन्होंने उम्माह की स्थिति को बेहतर बनाने वाली नीतियों को पोषित करने वाली सरकारों पर अपना नियंत्रण भी बनाये रखा है। उम्माह की स्थिति की व्याख्या आर्थिक कुप्रबंधन, अधिकारिक व्यवहार और सांस्कृतिक एकान्तता से दोषित निरपेक्ष अभिजनों के विपरीत में की गई है।

मिस्र की स्थिति में यह कहना कि मुस्लिम ब्रदरहुड सफल होगा मुश्किल है। इसे मिस्र के उत्तर–अधिकारिक वातावरण में अपनी भूमिका को कम करना पड़ेगा ताकि इसे मिस्र विद्रोह का अपहरण करने वाली ताकत के रूप में न देखा जाए। फिर भी हसन अल बन्ना या सईद कुत्ब के समय से मुस्लिम ब्रदरहुड में आंतरिक बदलाव आया है। यह भी वामपंथी एवं उदारवादी ताकतों के असंगठन से दुखी शहरी युवा मध्यम वर्ग के कुछ हिस्से और पक्के तौर पर शहरी गरीब के बड़े हिस्से को सहयोगी के रूप में गिनता है। मुस्लिम ब्रदरहुड का एक स्तम्भ व्यापार रहा है जिसने पहले छद्म रूप में इसके चुनावी राजनीति में हस्तक्षेप का सहयोग किया था। इनका मुबारक शासन ने बहिष्कार भी किया। मुस्लिम ब्रदरहुड भी लोकतंत्र को अर्थव्यवस्था की ऊँचाइयों पर बैठे मुबारक समर्थकों से सत्ता छीनने के एक उपयोगी हथियार के रूप में देखता है।

परन्तु नया इस्लामिक लोकलुभावनवाद हमेशा सफलता के इतना नजदीक नहीं रहता। यदि इंडोनेशिया में इसका मुख्य प्रतिनिधि PKS है, तो यह स्पष्ट है कि पार्टी सत्ता प्राप्त करने से बहुत दूर है। यह अपने आप में बड़ा रोचक हैं क्योंकि तुर्की या मिस्र के साथियों की तुलना में इसकी कमजोरी का एक स्त्रोत ताकतवर सुसंस्कृत मुस्लिम बड़े बुर्जुआ का अभाव है। यह अभाव इंडोनेशियन बुर्जुआ में नृजातीय–चीनी तत्वों के सतत् प्रभुत्व के कारण है।

चाहे सफल हो या असफल, नवीन इस्लामिक लोकलुभावनवाद का आधुनिक विश्व में इस्लामिक राजनीति के उद्देश्य, रणनीति और साधन के स्टीरियोटाइप को चुनौती देने में महत्वपूर्ण योगदान है। ■

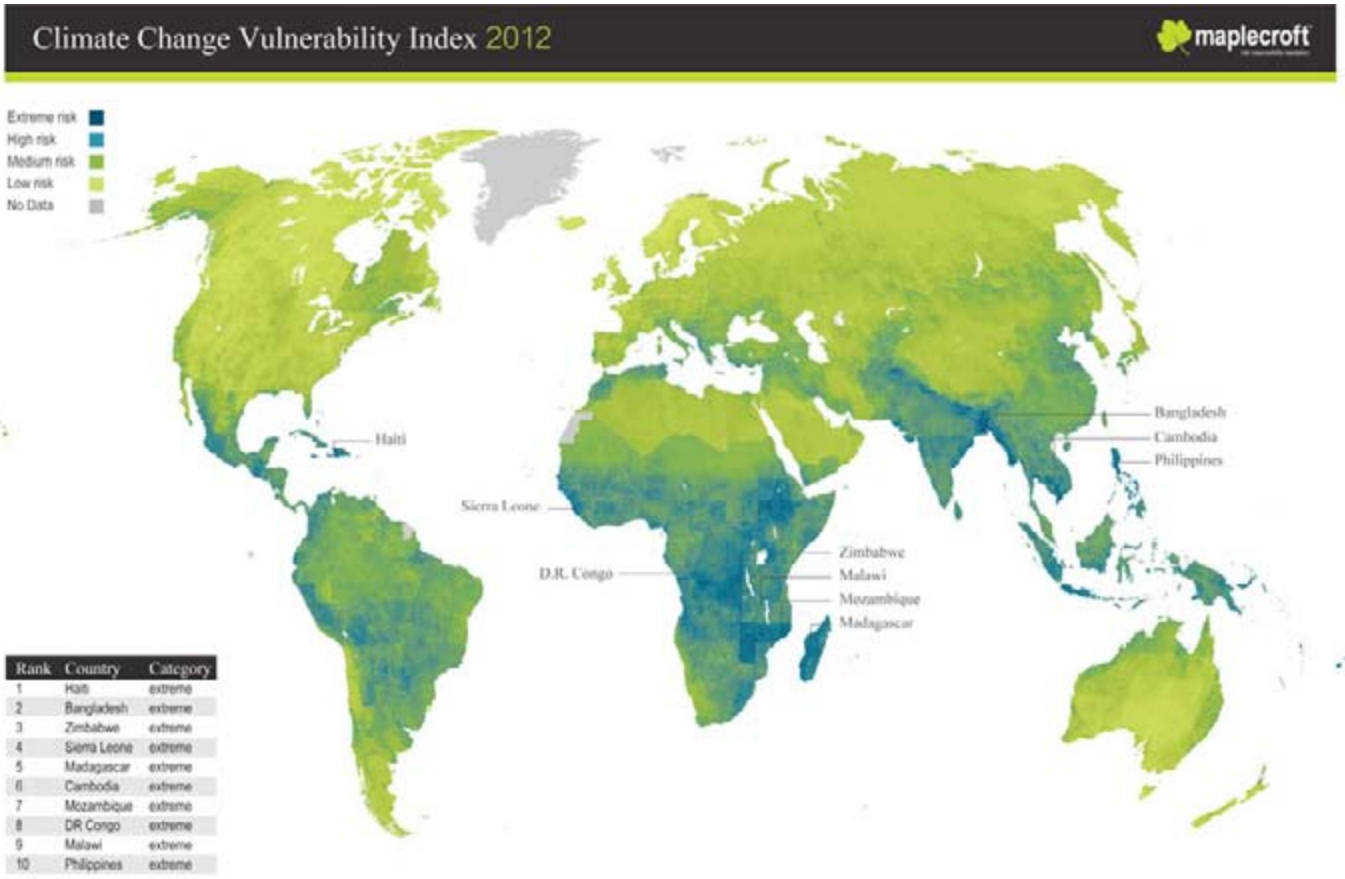

Rank	Country	Category
1	Haiti	extreme
2	Bangladesh	extreme
3	Zimbabwe	extreme
4	Sierra Leone	extreme
5	Madagascar	extreme
6	Cambodia	extreme
7	Mozambique	extreme
8	DR Congo	extreme
9	Malawi	extreme
10	Philippines	extreme

जलवायु परिवर्तन अतिसंवेदन शीलता। हल्के हरे क्षेत्र सबसे कम संवेदन शील है तथा गहरे नीले क्षेत्र सबसे अधिक संवेदन शील। उत्तर के दे शों में अत्यधिक प्रति व्यक्ति कार्बन उत्सर्जन है परन्तु वे जलवायु परिवर्तन से सबसे कम प्रभावित हैं जबकि दक्षिण के दे शों में सबसे कम कार्बन उत्सर्जन के बावजूद वे सबसे अधिक प्रभावित होंगे।

> कौन दोषी हैं? जलवायु परिवर्तन पर वार्ताओं का तूफानी दौर

हरबर्ट डोकेना, फोकस ऑन द ग्लोबल साउथ, फिलिपीन्स एवं केलीफोर्निया विश्वविद्यालय, बर्कले

इस दिसम्बर हजारों की संख्या में अधिकारी, सक्रिय कार्यकर्त्ता, पक्षकार और शायद कुछ सुपर–स्टार डर्बन में आयोजित होने वाली UN Framework Convention of Climate Change (UNFCCC) की 17वीं कांग्रेस में हिस्सा लेने के लिए उड़ान भरेंगे। अगली जून, फिर अनेक UNFCCC और अन्य पर्यावर्णीय समझौतों के हस्ताक्षरित होने के दो दशक पूरे होने पर रियो जायेंगे। सबसे जटिल और सबसे परिणामकारक अन्त–सरकारी ऐतिहासिक वार्ताओं को पारित हुए 20 वर्ष हो गये हैं परन्तु इनसे क्या अर्जित किया गया?

लेख लिखते समय, बुलाकान, फिलीपीन्स में सैंकड़ों लोग एक और तूफानी रात छतों पर भूखे और बचाव का इंतजार करते हुए गुजार रहे हैं। नवीनतम सुपर–टायफून के कारण बाढ़ के बढ़ते जलस्तर से बचने के लिए वे नाव का इंतजार कर रहे हैं। वहाँ दो ही बचाव नाव हैं जो कि घर–घर जा सकती हैं। देश के सबसे खराब टायफून की वर्षगांठ के कुछ ही दिन बाद और एक अन्य टायफून के आने के एक दिन पहले ऐसा हुआ।

सरकारों द्वारा प्रथम बार उत्सर्जन को कम करने के लिए समझौता करने के 20 वर्ष बाद तूफान और अधिक शक्तिशाली तरीके से तथा अक्सर आ रहे हैं और अकाल भी अधिक प्रचंड हो रहे हैं। ऐसा ही मौसम विज्ञान ने भविष्यवाणी की थी। इण्टरनेशनल इनर्जी एजेन्सी की मई में सार्वजनिक की गई एक रिपोर्ट के अनुसार, पिछले वर्ष कार्बन उत्सर्जन वास्तव में इतिहास में अब तक सबसे ज्यादा हुए हैं। ऐसा क्या कारण है कि समझौतों के बावजूद उत्सर्जन, जिन्हें दार्शनिक पीटर सिंगर ''मारने के नये तरीके'' की संज्ञा देता है, अभी भी लगातार बढ़ रहे हैं।

जलवायु वार्ताओं का अवलोकन करने के लिए मैं पिछले जून बॉन गया था और वहाँ किन मुद्दों पर बहस हो रही है इसे देखकर

> >

मैं दंग रह गया। 'प्रतिज्ञा एवं समीक्षा' का अन्य स्वरूप, एक ऐसा प्रस्ताव जिसमें प्रत्येक देश स्वयं ही निर्णय लेगा कि उसे किस तरह से कार्यवाही करनी है। किसी प्रकार का बाध्यकारी लक्ष्य नहीं और न ही कोई वादा। एक अन्य हॉल में, बोलिविया जलवायु परिवर्तन से होने वाली दुर्घटनाओं से निपटने के लिए ग्लोबल टैक्स कोष की आवश्यकता पर बल दे रहा था। मुझे बहुत आश्चर्य हुआ क्योंकि वार्ताओं के प्रारंभिक इतिहास को पढ़ने के कारण मुझे मालूम था कि ये दोनों प्रस्ताव 90 के दशक में सदन में रखे और हटा दिये जा चुके हैं। फिर भी, ये एक बार पुनः पटल पर रखे जा रहे हैं। मैं आंशिक रूप से अपने आप को वार्ताओं के नवीन घटनाक्रम से परिचित होने के लिए बॉन आया था। यहाँ आ कर पता चला कि वे वापिस वहीं पर आ गये जहाँ से शुरू हुए थे। वार्ताएँ अटक क्यों गई हैं?

विश्व भर से वार्ताओं में सम्मिलित होने वाले 20 से भी अधिक लोगों का साक्षात्कार लेने और वार्ता प्रलेखों के सैंकड़ों पृष्ठ पढ़ने के बाद, एक आंशिक उत्तर यह हो सकता है कि दोनों मुख्य ब्लॉक उत्तर और दक्षिण ने अभी तक वार्ताओं में सबसे बुनियादी और आधारभूत प्रश्न का संतोषजनक उत्तर नहीं ढूँढा है ; दोषी कौन है?

वास्तव में, इस बढ़ती हुई बहस के बीच अभी भी यह सर्वाधिक लौकिक नैतिक प्रश्न समझौता कराने में असफल होता है। शुरूआत से ही अधिकतर विकासशील देशों–उच्च औद्योगिक से लेकर गरीबतम, ने उत्तर को उनके औद्योगिकीकरण के द्वारा उत्सर्जन के कारण जलवायु परिवर्तन के लिए उत्तरदायी ठहराया है। सभी विकसित देश, अमेरिका और यूरोप के बीच झगड़े के बावजूद, इसको अस्वीकार करने में एकजुट रहे हैं।

कुछ वर्षों में यू.एस. की वार्ता स्थिति बदली है परन्तु मुख्य वार्ताकार टॉड स्टर्न के अनुसार, ''हम वातावरण में उत्सर्जन छोड़ने में हमारी ऐतिहासिक भूमिका को स्वीकारते हैं परन्तु अपराध बोध या सदोषता अथवा क्षतिपूर्ति की बात मैं स्पष्टतया अस्वीकार करता हूँ।'' इस भावना से सभी निर्णायक, चाहे वो रिपब्लिकन हों या डेमोक्रेट, विश्वासी हो या संदेहवादी, व्यापार पक्षकार या फिर बेल्तवे (Beltway) पर्यावरणविद्, सहमत हैं। प्रत्येक यू.एस. वार्ताकार, जिससे मैंने बातचीत की है, उसने यह वाक्य दोहराया है कि हमें उस प्रघटना के लिये दोषी नहीं ठहराया चाहिए जिसके बारे में हमें यह मालूम नहीं था कि वह (शायद) नुकसान पहुँचा रही है।

यह सही है कि पक्षकार ''सर्वसामान्य परन्तु भिन्न उत्तरदायित्व और अपनी क्षमताओं'' के अनुसार योगदान देने पर कभी से राजी हो गये हैं परन्तु यह वाक्य अब वार्ताओं के इतिहास में सर्वाधिक विवादास्पद है। दक्षिणी वार्ताकार 'भिन्नता' पर फोकस करते हैं और यह मानते हैं कि इसका ताल्लुक उत्तर के ऐतिहासिक अपराध–बोध से है। उत्तर के वार्ताकार ''सर्वसामान्य'' शब्द पर जोर देते हैं और दक्षिणी वार्ताकारों की तुलना में ''अपनी क्षमताएँ'' जोड़ देते हैं अर्थात् वे इसलिए योगदान देंगे क्योंकि वे सक्षम हैं न कि इसलिए कि वे अनुग्रहित हैं।

यह कोई शाब्दिक तलवारबाजी नहीं है क्योंकि प्रत्येक पक्ष का उत्तरदायित्व पर दृष्टिकोण 3 मूर्त प्रश्नों के जवाब से अभिमुखित है। जो तीन प्रश्न वार्ताओं को परेशानी कर रहे हैं वे हैं : अर्थात् कौन नियंत्रण में हैं? किसे क्या करना चाहिए? किसकी क्या नैतिक जिम्मेदारी हैं?

इस बात पर जोर देते हुए कि वे व्यथित हैं, दक्षिण ने निर्णय–प्रक्रिया में अधिक आवाज के लिए जोर लगाया है। उन्होंने दण्डात्मक और अनिवार्य तरीकों को वरीयता दी है और उत्तर से 'क्षतिपूर्ति' की लगातार माँग की है। अतः वे ग्लोबल टैक्स या अत्यधिक उत्सर्जन पर जुर्माना लगाने पर जोर डालते हैं। अपराध बोध को अस्वीकार करते हुए उत्तर यह आग्रह करता है कि वे अधिक योगदान देने को इसलिए तैयार हैं क्योंकि वे ऐसा कर सकते हैं न कि इसलिए कि उन्हें करना चाहिये। वे हर समय निर्णय–प्रक्रिया को सीमित करने, तथा लचीलेपन अथवा कम लागत की माँग करते हैं। वे ऐसा अनिवार्यतः नहीं बल्कि जहाँ तक संभव हो, स्वैच्छिक रूप से या आवश्यकता पड़ने पर पुरूस्कृत करने के द्वारा करना चाहते हैं। अतः वे 'वचन और समीक्षा' या फिर कार्बन ट्रेडिंग जैसे तरीकों पर बल देते हैं।

ये अलग शुरूआती बिन्दू, जो व्यापक ऐतिहासिक घटनाक्रम जिसमें उत्तर–दक्षिण असमानता और वैश्विक पूंजीवाद की गतिशीलता है, कई मुद्दों पर एक ही मत पर न पहुँचने की विफलता की व्याख्या करते हैं।

सभी 193 पार्टियों के बजाय वार्ताओं को सिर्फ बड़े उत्सर्जकों तक सीमित करने के उत्तर के प्रयास बर्कले में अर्थशास्त्र के प्रोफेसर ब्रेड डीलोंग को बहुत युक्तिसंगत लगते हैं। इन्होंने इसी बातचीत में माना था कि कई सॅन फ्रांसिस्कों निवासी उनके यहाँ लॉस एन्जल्स के समान मौसम के होने का बुरा नहीं मानेंगे क्योंकि वे ऐसा मानते हैं कि जो नेतृत्व करते हैं उन्हें ही निर्णय लेना चाहिए। परन्तु यह उन लोगों को अस्वीकार्य है जो इस बात से चिंतित हैं कि न्याय किस तरह किया जाता है : आक्रामक को अक्सर उनके दण्ड की शर्तों का निर्णय लेने की अनुमति नहीं दी जाती।

दण्डित करने की बजाय पुरूस्कृत करने की माँग उदारचित् नेताओं को युक्तिसंगत लग सकती है लेकिन उन्हें जो उन्हें अपराधी के रूप में देखते हैं, बुरी लगती है। गलती करने वालों को अक्सर आसान दण्ड चुनने को अनुमति नहीं दी जाती है। ठीक उसी प्रकार मौसमी कोष को सभी पार्टियों के लोकतांत्रिक नियन्त्रण के अन्तर्गत लाने के विरोध में उत्तर का पक्ष उन लोगों को न्यायसंगत लगता है (इस आधार पर कि दक्षिण का भरोसा नहीं किया जा सकता) जो स्वयं को उदारचित् नेता के रूप में देखते हैं। लेकिन यहीं उन लोगों को बकवास लगता है जो उन्हें अपराधी मानते हैं : दोषी पीड़ित की नैतिकता को आहत करके क्षतिपूर्ति से बच नहीं सकता।

जलवायु कूटनीति के क्षेत्र में भी, अपराध भाव के प्रश्न और बेगुनाही से बचना मुश्किल है क्योंकि इन प्रश्नों के उत्तर से ही हम अन्य लोगों के साथ हमारे सामाजिक सम्बन्धों की शर्तों को परिभाषित कर सकते हैं विशेषतः असमानता की स्थिति में। दो दशकों से उत्तर और दक्षिण इन शर्तों के हर कदम पर संघर्ष कर रहे हैं : दूसरों से प्रत्येक क्या न्यायोचित रूप से माँग सकता है, दूसरे स्वंय से क्या माँग सकते हैं, लोगों के अधिकार क्या है, इत्यादि।

अब तक, उत्तर के देशों ने दक्षिण के कुछ देशों के सहयोग से अपनी बेगुनाही के दावे को संस्थागत करने में सफलता प्राप्त करी है। यह दावा क्योटो प्रोटोकोल के लचीलेपन की गारण्टी और कार्बन ट्रेडिंग (जिसने दक्षिण के पहले दण्ड और अनिवार्य क्षतिपूर्ति के प्रस्ताव को खारिज कर दिया था) के स्वीकारने से पूरा हुआ।

लेकिन इसका यह अर्थ नहीं है कि यह प्रश्न हमेशा के लिए सुलझा लिया गया है जैसा कि प्रत्यास्थापन ;restitutionद्ध, अंतर्राष्ट्रीय जलवायु न्यायालय या फिर जलवायु न्याय की सतत् मांग दर्शाती है। जब तक इसका संतोषजनक रूप से समाधान नहीं हो जाता, वार्ताएँ अगले 20 वर्षों तक भी वहीं के वहीं अटकी रहेंगी। यह बर्कले पहाड़ियों पर चढ़े हुए लोगों के लिए तो ठीक होगा परन्तु बुलाकन की छतों पर छोड़ दिये गये लोगों के लिए नहीं। ■

> वैश्विक श्रम के लिए सम्भावनाएं क्या हैं?

राबर्ट लेम्बर्ट, वैस्टर्न आस्ट्रेलिया विश्वविद्यालय, श्रमिक आन्दोलन पर निर्मित आइ.एस.ए. की शोध समिति के भूतपूर्व अध्यक्ष।

आस्ट्रेलिया–वेनेजुएला एकजुटता तंत्र, कराकास में मे डे अभियान, 2008

गहन अन्धकार के दौर में भी हमारा अधिकार है कि हम कुछ सुखद रोशनी की अपेक्षा करें। यह सुखद रोशनी सिद्धान्तों एवं अवधारणाओं से मिले, की सम्भावना कम होती है। यह सुखद रोशनी तुलनात्मक रूप में अनिश्चितताओं, असमान प्रकृति की उभरने वाली शीघ्रताओं एवं उन कमजोर रोशनियों से उभर सकती है जो कुछ पुरूषों एवं स्त्रियों के जीवन एवं श्रम सम्बन्धी क्रियाओं से प्राप्त होती है। यह उभार उन सभी परिस्थितियों एवं समयावधियों से आ सकता है जो उन स्त्रियों एवं पुरूषों को इस पृथ्वी पर अवसर के रूप में मिला है।

हन्नाह आरन्ट, *'मैन इन डार्क टाइम्स'*

हम आज अनेक बहुस्तरीय संकटों (जलवायु, वित्त, श्रम) के मध्य अपना जीवन यापन कर रहे हैं। इस जीवन यापन के दौर में एडवर्ड वेबस्टर, पन नगई एवं एनरीक ड ला गार्जा (ग्लोबल डायलाग 1.5, जुलाई 2011) के द्वारा वैश्विक श्रम के विषय में किया गया वैचारिक हस्तक्षेप हमें अनेक महत्वपूर्ण मुद्दों पर विचारने के लिए प्रोत्साहित करता है। क्या समाज वैश्विक निगमों, वैश्विक वित्त, वैश्विक संस्थाओं एवं राष्ट्र–राज्यों की विस्तृत एवं समग्र शक्ति का प्रतिरोध कर सकता है एवं मानव जाति के सम्मुख पनपे भयावह संकट से मुक्ति के किसी विकल्प को आरोपित कर सकता है? वैश्विक श्रम विश्व के सभी भागों में स्थित समस्त समाजों को सक्रिय कर सकता है जिससे प्रकृति के साथ विश्व के नवीन प्रकृति के सम्बन्ध उभर सकें, वित्त का नयी प्रकृति का शिल्प उभार ले सके, वैश्विक निगमों, व्यापार/वाणिज्य एवं निवेश के क्षेत्र में नियमों की प्रणाली में आमूल चूल बदलाव हो सकें ताकि श्रम सुरक्षा के पक्षों की पुनर्रचना हो सके एवं सामाजिक दृष्टि से न्यायोचित प्रारूप पर समाज में संतुलन स्थापित हो सके। सम्भव है कि ऐसा आन्दोलन नव्य उदारवाद से उत्पन्न विसंगतियों को चुनौती दे सके और विध्वंसकारी संकटों से सम्बद्ध कारकों के समाधान की रूपरेखा उभर सके। इस तरह की सम्भावनाओं से सम्बन्धित सोच भी इस दौर में निरर्थक सी लगती है क्योंकि नव्य उदारवाद की संस्थाएं अत्यन्त शक्तिशाली हैं।

इस प्रक्रिया से जुड़ा प्रत्येक उपरोक्त योगदान इन विषयों के विभिन्न पक्षों को रेखांकित करता है। दक्षिण अफ्रीका में श्रमिकों की श्रम सम्बन्धी जीवनचर्या पर शोध करते हुए वेबस्टर 'एकजुटता के विचार' की विवेचना करते हैं तथा बताते हैं कि कुछ उदाहरणों में एकजुटता से सम्बद्ध संस्कृति एवं रणनीति भले ही बिखरती प्रतीत होती हो पर जहां तक सशक्तिकरण के संदर्भ हैं यह संस्कृति व रणनीति मजबूत ही हुई है। यदि स्थानीय स्तर पर व्यक्तिवाद के रूपान्तरण को चुनौती मिल रही है तो वैश्विक रचना में उस चुनौती के क्षेत्र कितने व्यापक होंगे। वैबस्टर का मत है कि वैश्विक रचना के क्षेत्र में तीन प्रकार की एकजुटता महत्वपूर्ण हैं–(i) मानवाधिकार (क्षतिग्रस्तों की सुरक्षा) (ii) उत्पादन (कार्यस्थलों की सम्बद्धता) एवं (iii) नियमन (अधिकारों एवं मापकों के संरक्षण हेतु कानून) 'विश्व के उद्योग' (वर्ल्ड'स फैक्ट्री) के रूप में चीन की पन नगई की गहन विवेचना इस निष्कर्ष को स्थापित करती है कि यह स्थिति 'नवीन श्रमिक वर्ग के लिए वैश्विक स्तर पर एक भयावह स्वप्न सिद्ध होगी'। 'हकाऊ' व्यवस्था ग्रामीण श्रमिकों को नगरों में काम करने की अनुमति तो देती है पर नगरों में रूकने या रहने की अनुमति नहीं देती' अतः ये श्रमिक 'अर्द्ध श्रमिक' बन जाते हैं या चीन के सभी रूपान्तरित हुए क्षेत्रों में ये 'बाध्य' हुए घुमन्तुओं के रूप में उपस्थित होते हैं। लेखिका इस निष्कर्ष को स्थापित करती है कि किस प्रकार यह 'अ–प्रस्थिति' एवं दमन मूलक स्थितियाँ सामूहिक प्रतिरोध का चीन में महत्वपूर्ण विस्तार कर रही हैं।

अन्त में एनरीक ड ला गार्जा द्वारा लातिन अमेरिकन अनुभवों के आधार पर वेबस्टर के इस विचार 'श्रम का वैश्वीकरण एक सामाजिक आन्दोलन है जो पूंजी के वैश्वीकरण का परिणाम है' पर प्रतिक्रिया करते हैं; इस प्रकार का आन्दोलन नवीन श्रमिक अस्मिताओं के माध्यम से मूर्त रूप लेगा। अनौपचारिक क्षेत्र में श्रमिकों की शक्ति एवं मुल्य श्रंखलाओं में सम्बद्धताओं के माध्यम से ये आन्दोलन उभार ले सकते हैं। लातिन अमेरिका में ऐसे श्रमिकों का प्रतिशत 40 से लेकर 70 के बीच है। ऐसे आन्दोलनों के उभार होने पर एनरीक ड ला गार्जा प्रश्न करते हैं कि क्या श्रमिक संघ नव्य उदारवाद का विरोध करेंगे। इस प्रश्न के उत्तर में ही श्रमिकों की भूमिका की परिभाषा एवं समाज के भविष्य के स्वप्न के पक्ष छिपे हुए हैं।

परन्तु, उपरोक्त विचार केवल विशुद्ध विचार बन कर रहे जायेंगे यदि अभिकरण (एजेन्सी), राजनीति, आन्दोलन एवं क्रिया के मूल्यांकन के आधार पर वैश्विक श्रम के असमान विकास का विश्लेषण न किया जाय। यह संक्षिप्त प्रत्युत्तर इन क्षेत्रों में हो रही बहस के लिए सवालों को उत्पन्न करता है। यह बहस शैक्षणिक जगत को अनेक

>>

सीमाओं के परे ले जाती है। यह एक छोटा प्रयास है जो वेबस्टर की एकजुटता सम्बन्धी वैचारिकी की तरफ ले जाता है।

> अभिकरण (एजेन्सी)

अब यह आवश्यक है कि स्थापित एवं नवीन श्रम अन्तर्राष्ट्रीयतावाद (एन एल आइ) के मध्य अन्तर को समझा जाए। स्थापित श्रम अन्तर्राष्ट्रीयतावाद जहाँ कैरियर की चेतना वाले प्रशासकों को निर्मित करता है वहीं नवीन श्रम अन्तर्राष्ट्रीयतावाद संघर्ष की तरफ झुकाव वाले सक्रिय कार्यकर्ताओं को अस्तित्व में लाता है। परिवर्तन को सक्रिय कार्यकर्ता गति देंगे, यह परिवर्तन मानवीय स्वतन्त्रता की अवधारणा से प्रोत्साहन प्राप्त करेगा, भले ही इसके लिए बड़े स्तर की व्यक्तिगत कीमत ही क्यों न चुकानी पड़े, जबकि इसके विपरीत स्थापित श्रम अन्तर्राष्ट्रीयतावाद में उन लोगों को महत्व मिलता है जिनके लिए वैश्विक श्रम रोजगार अवसर है। एक ऐसा अवसर जो उस कैरियर को महत्व देता है जिससे मध्यवर्गीय सुविधाएँ प्राप्त की जा सकें। वैश्विक दक्षिण जहाँ सक्रिय कार्यकर्ताओं को जन्म दे रहा था और उसे निरन्तरता प्रदान कर रहा था, वहीं वैश्विक उत्तर में अस्तित्व में आई वैश्विक वित्तीय अव्यवस्था ने समान प्रकार की गतिशीलता को जन्म दिया है। इस संकट ने वैश्विक उत्तर में क्रोध की लहर उत्पन्न कर सक्रिय कार्यकर्ताओं के जन्म की सम्भावनाएँ उत्पन्न की हैं। ग्रामशी के द्वारा प्रस्तुत किया गया ''इच्छा के आशावाद'' का मुख्य विचार उस वैचारिक रचना को चुनौति देता है एवं उन शिक्षाविदों को चुनौति देता है जो इस आशावादिता के साथ आगे बढ़ते हैं। यह केवल घटनाओं के रिकॉर्ड करने तक ही सीमित नहीं है अपितु यह उन जनबुद्धिजीवियों को अवसर देता है जो अपने कार्यालयों एवं सड़कों पर उभर रही सक्रियता के मध्य स्वयं को प्रस्तुत करते हैं। यह सम्भव हो सकता है कि चोरी एवं वैश्विक वित्तीय संकट से उत्पन्न हुआ पृथक्करण इन बुद्धिजीवियों के मध्य आन्तरिक क्रोध को तीव्र कर सके। यह भी देखना पड़ेगा कि हम विशुद्ध बाजार के तर्क से उत्पन्न हुए विध्वसंकारी चक्र को विच्छेदित करने के लिए किस सीमा तक प्रतिबद्ध हैं। हमारी अपनी चयन प्रक्रियाओं की प्रकृति अथवा इच्छाओं की प्रकृति यह अन्तर्दृष्टि देती है कि अभिकरण किस प्रकार आलोचनात्मक चर के रूप में उभरने लगते हैं। यह उभार राजनीति को एक नया चेहरा प्रदान कर सकता है।

> राजनीति

कुछ महत्वपूर्ण अपवादों के बावजूद उत्तर में वैश्विक श्रम का सांस्थीकरण (अन्तर्राष्ट्रीय श्रमिक संघ कन्फेडरेशन एवं वैश्विक श्रमिक संघ फेडरेशन्स) वह पक्ष है जो राजनीति एवं अर्थतन्त्र के मध्य के अन्तर को सीमित करता है। यह नव्य उदारवाद के प्रभाव की आलोचना तो करता है परन्तु नव्य उदारवाद में निहित विच्छेदन के अवयवों को चुनौति नहीं देता। यह एक प्रकार का व्यापारिक स्वतन्त्रता का समर्थन करने वाला वैश्विक श्रमिक आन्दोलन है जो इस मत पर आधारित है कि श्रमिकों के अधिकार एवं सामाजिक कार्यक्रमों के साथ वैश्वीकरण की कीमतों को समायोजित किया जा सकता है। इस प्रकार की वैश्विक श्रम संस्थाओं के लिए अनेक प्रकार की क्रियाएँ शक्ति अभिजन के साथ लॉबिंग करने पर सीमित हो जाती हैं। हमें यह जानना चाहिए कि पिछले पचास वर्षों से भी अधिक के समय में इस प्रकार की रणनीति से आंशिक सफलता ही प्राप्त हो सकी है। एक सीमा तक और बिना किसी अन्तर्विरोध के यह आशा की जा सकती है कि राजनीति के क्षेत्र में बदलाव विश्व के दक्षिणी भाग से प्रारम्भ होगा जहाँ राष्ट्रीय स्तर पर श्रमिक आन्दोलन तीव्र हैं। उदाहरण के लिए ब्राजील में 'कट' ;ब्न्द्ध अर्जेन्टीना में 'सी.टी.ए.', दक्षिण अफ्रीका में 'सी.ओ.एस.ए.टी.यू.', भारत में 'सी.आई.टी.यू.' एवं कोरिया में 'के.सी.टी.यू.' उन परम्पराओं की अभिव्यक्ति हैं जिनके मूल में प्रतिरोध का तत्व है। यह प्रत्येक आन्दोलन पिछले दो दशकों से नव्य उदारवादी पुनर्रचना का तत्व है। यह प्रत्येक आन्दोलन पिछले दो दशकों से नव्य उदारवादी पुनर्रचना के विरूद्ध एक निर्णायक संघर्ष कर रहा है। ये सारी शक्तियाँ 'एस.आई. जी.टी.यू.आर.' (वैश्वीकरण एवं श्रमिक संघ अधिकारों के प्रति दक्षिणी प्रयास–सदर्न इनीशियेटिव ऑन ग्लोबलाइजेशन एण्ड ट्रेड यूनियन राइट्स) के अन्तर्गत एकताबद्ध हो रही हैं और उन नवीन प्रयासों को एवं दृष्टिकोण को स्वरूप प्रदान कर रही हैं जिनसे यह कहा जा सके कि यह संघर्ष क्यों किया जा रहा है नाकि केवल इतना कि यह संघर्ष किसके विरूद्ध है। ''एस.आइ.जी.टी.यू.आर.'' अपने प्रारम्भिक चरण में नव्य उदारवाद के विकल्प की मूर्त विशेषताओं पर बहस कर रहा है और इसके साथ–साथ उन तात्कालिक मध्यस्तरीय एवं दीर्घकालिक रूपान्तरण की सम्भावनाओं को तलाश रहा है जो उन माँगों से सम्बन्धित है जिनसे नव्य उदारवाद का विकल्प उभरकर आ रहा है। हमारा उद्देश्य यह है कि यह संघर्ष एक नई प्रकृति की वैश्विक स्वतन्त्रता का संघर्ष है जिसमें हर स्तर पर स्वतन्त्रता की राजनीति की मांग निहित है। इस प्रकार की राजनीति का सारतत्व मार्क्स के संकेन्द्रण एवं दमन के सिद्धान्त से दिशा प्राप्त करता है और इसमें पोल्यानी का बाजार, समाज एवं कमोडिफिकेशन (इजाजती–करण) का विश्लेषण सम्मिलित है। यदि दक्षिण में वैश्विक श्रम एक नई राजनीति को जन्म देता है तो यह उत्तर में अनेक शक्तियों को प्रोत्साहित करेगा क्योंकि वर्तमान संकट अत्यन्त गंभीर प्रकृति का है। सक्रियतावाद एवं एक नवीन राजनीति उस आधार को स्थापित कर रही है जो आन्दोलन के एक नये प्रकार के लिए रूपरेखा तैयार करता है।

> एक नवीन वैश्विक आंदोलन की तरफ (एकजुटता का एक नया विचार)?

वैश्विक सामाजिक आन्दोलन के एक नये प्रकार की चर्चा अवधारणात्मक रूप में डेविड हार्वे करते हैं। उनकी दृष्टि में यह सामाजिक आन्दोलन अलगावित, सुनहरे भ्रम को तोड़ चुकी, वंचित एवं विभिन्न संसाधनों से रहित जनता की व्यापक एकजुटता से निर्मित होगा। यह इस अवधारणा का एक उत्तेजक पक्ष है। पेरिस में जून 2011 में हुई ग्लोबल यूनियन (वैश्विक श्रमिक संघ) की एक अन्तर्राष्ट्रीय कान्फ्रेन्स (यू.एन.आई.) में श्रमिक संघों के फ्रांस में सामान्य महासंघ (सी.जी.टी.) के एक नेता ने खेद के साथ यह कहा कि श्रमिक आन्दोलन स्पेन में युवा ''इन्डिगनाडोज'' (indignados), मिश्र के aganaktismenoi (दमन के शिकार) एवं अरब के युवाओं के साथ सम्पर्क करने में असमर्थ रहा है। ये संघर्ष लोकतन्त्र की स्थापना से जुड़े संघर्ष का हिस्सा हैं जिनका विस्तार किया जाना जरूरी है ताकि व्यापकता प्राप्त कर सह संघर्ष नव्य उदारवादी पूँजीवादी विकास के विरूद्ध संघर्ष में रूपान्तरित हो सकें। एक नवीन आन्दोलन के सभी अवसर आज उपस्थित हैं लेकिन स्थापित वैश्विक श्रम ने कुछ सम्बद्धताएँ उत्पन्न की हैं परन्तु यह उस अवसर को पकड़ने में असफल रहा है जिसे केन्द्र में रखकर एक व्यापक आन्दोलन उभार ले सकता है। वास्तव में संस्थागत वैश्विक श्रमिक आन्दोलन इस तरह से विकसित हुआ है कि पाँच सितारा होटलों में लॉबिंग के द्वारा वे समूचे विश्व की चर्चा करते हैं और उनकी ऐसी कोई इच्छा नहीं है कि वे श्रमिक आन्दोलन को सक्रियता एवं सांगठनिक क्षमता के साथ सड़कों पर लाएँ। परिणामस्वरूप ऐसा कोई समन्वित वैश्विक सामूहिक सक्रियता का पक्ष नहीं उभरा है और इसलिए इस तरह की सक्रियता की अपेक्षा दक्षिण से की जा सकती है।

> वैश्विक सामूहिक क्रिया

अभिजन लॉबी से अस्तित्व में आई श्रमिक राजनीति ने बाध्य किया है कि एक ऐसी राजनीति अस्तित्व में आए जो एक लम्बे समय तक एक तरीके से उत्पन्न हुई रेडिकल क्रिया का रूप ले सके। यह रेडिकल क्रिया वैश्विक अर्थव्यवस्था की रणनीति को विच्छेदित कर सकती है। जहाजरानी एवं यातायात के क्षेत्र में यह अव्यवस्था सामान्यतः उभार ले सकती है और इसके साथ–साथ वैश्विक उत्पादन के विस्तृत जाल के अन्तर्गत भी यह अव्यवस्था को उत्पन्न कर सकती है। 1990 के दशक में 'एस. आई. जी. टी. यू. आर.' ने अनेक सफल कार्यक्रम किए जो कि जहाजरानी से सम्बन्धित क्रियाओं के बहिष्कार से जुड़े थे। कोरिया में पिछले दशक में एक श्रमिक नेता अनेक बार जेल में आता जाता रहा है क्योंकि उसने एक ऐसा दबाव उत्पन्न किया जिसके कारण माल ढोने वाले ट्रकों की आवाजाही मन्द हो गई परिणाम–स्वरूप समूचे शहर की परिवहन सेवा अवरूद्ध हो गई। इस प्रकार की अनुशासित एवं सामूहिकता से संचालित क्रियाएँ यह प्रदिर्शत करने में सक्षम हैं कि वैश्विक श्रम की परोक्ष शक्ति क्या है।

क्या हममें वह कल्पना एवं राजनीतिक इच्छाशक्ति है जो जनबुद्धिजीवियों को समृद्ध कर इन क्षेत्रों में नये परिदृश्यों को उत्पन्न करे। वैचारिक युद्ध में जनसमाजशास्त्रियों की अत्यन्त महत्वपूर्ण भूमिका होती है। विचार के इस संघर्ष के परिणामस्वरूप नवीन राजनीति, नवीन आन्दोलन एवं नवीन क्रियाएँ स्वरूप ग्रहण करती हैं जिनसे यह आशा बलवती होती है कि आन्दोलन अत्यन्त शक्तिशाली बनेंगे। हो सकता है कि यह प्रयास आने वाले दशकों में महत्वपूर्ण परिणाम उत्पन्न करें अथवा न करें लेकिन ऐसे लोगों की संख्या बढ़ेगी जो इस प्रकार के विरोधों को सड़कों पर लाएंगे न कि होटल में बैठकर विचार करेंगे। पनपने वाली यह स्थितियां 21वीं शताब्दी को आशा की किरण देने में समर्थ होंगी जिसका संकेत हन्ना आरंट ने अपने विचारों में उस समय प्रस्तुत किया जब वे 20वीं शताब्दी के निराशावादी दौर की चर्चा कर रही थीं। ■

> आत्मखोज : इजरायल में एक जमीनी नागरिकीय समाज

देवोरा कालेकिन–फिशमैन, हायफा विश्वविद्यालय, इजरायल, प्रकाशन इकाई आई.एस.ए. की भूतपूर्व उपाध्यक्ष एवं इंटरनेशनल सोशियालॉजी रिव्यू ऑफ बुक्स की सम्पादक।

इजरायल में बाजारीकरण के विरुद्ध गर्मी में होने वाले विरोध प्रदर्शन

अरब में बसन्त का समय इजरायल में गर्मी का समय होता है। स्वसन्तुष्ट दक्षिणपंथी समूहों के गठबन्धन को दो महीने से चल रहे विरोध प्रदर्शनों ने अव्यवस्थित कर दिया। इस गठ–बन्धन में दो तिहाई जनसंख्या नीसेट (knesset) समूह के लोगों की है।

इन गर्मियों में नागरिकों ने खुले हृदय से एक–दूसरे के साथ इस तर्क को स्वीकारा कि एक साथ आगे बढ़ना अथवा जीवनयापन करना कठिनाइयों भरा है। उन्हें एक ऐसा संयुक्त क्षेत्र मिला जो कि युद्ध में सक्रिय सैनिक इकाइयों के लिए आरक्षित होता था। सितम्बर तक राष्ट्रीय सरकार एवं विभिन्न नगरों के निगम आन्दोलनकारियों को प्रसन्नतापूर्वक उत्साहित कर रहे थे। इससे अच्छा चिन्ह क्या हो सकता है कि इजरायल में लोकतन्त्र है। सड़कों पर पुरूष एवं महिलाएँ नारे लगाकर अपने आक्रोश को व्यक्त कर रहे थे। अरब के लोग एवं यहूदी मध्य वर्ग एवं निम्न वर्ग संसाधनों में न्यायोचित वितरण/पुनर्वितरण की मांग कर रहा था और एक ऐसी नवीन सरकार के निर्माण के लिए

>>

आन्दोलनरत् था जो जनता की सेवा कर सके। इन विरोध प्रदर्शनों में सभी आयु के नागरिक सम्मिलित थे और आने वाले शनिवार की रातों को उनकी संख्या में वृद्धि हो जाती थी। एक ऐसा चौथा आन्दोलन तीन सितम्बर को हुआ जिसमें अप्रत्याशित रूप से लगभग चार लाख तीस हजार से अधिक लोगों ने सहभागिता की। पूर्व में इतनी बड़ी संख्या में सहभागी होंने की कल्पना नहीं की जा सकती थी (यह कुल जनसंख्या का 7: था)। तेल अबीब में 3 लाख से अधिक एवं हायफा में 50,000 अरबी एवं यहूदियों ने तथा देश के विभिन्न नगरों में हजारों की संख्या में लोगों ने प्रदर्शन किए। इन प्रदर्शनों में सैकड़ों लोग ऐसे थे जो कि अरब के ग्रामीण क्षेत्र के नागरिक थे। इन आन्दोलनों के संयोजकों ने विरोध करने वाले सहभागियों की इस बड़ी संख्या को किसी भी राजनीतिक दल के प्रति प्रतिबद्ध नहीं होने दिया। इन संयोजकों ने शिक्षाविदों के साथ मिलकर समितियों का गठन किया और विभिन्न मांगों को सुनिश्चित स्वरूप दिया। सरकार अपनी प्राथमिकताओं को बदले, आकर्षक एवं शिष्ट प्रकृति के रोजगार क्षेत्रों में व्यय करे। आकर्षक एवं सुविधासम्पन्न आवास प्रदान करे एवं सुव्यवस्थित स्वास्थ्य एवं शिक्षा सेवाएं प्रदान करे को मांगों में सम्मिलित किया गया। सरकार ने भी अपने स्तर पर समिति का गठन किया जिसका कार्य एक निर्धारित बजट के अन्तर्गत इन मांगों को पूरा करने वाली सम्भावनाओं को तलाशना था। इन प्रदर्शनों के चरम स्तर पर आन्दोलनकर्ताओं ने विभिन्न क्षेत्रों के लोगों को जोकि हजारों की संख्याओं में थे विचार विमर्श के लिए बैठकों में आमंत्रित किया। इन बैठकों की संख्या एक हजार थी। इन बैठकों में समस्याओं के विश्लेषण किए गए और उन प्रस्तावों की रूपरेखा बनाई गई जिन पर सरकार को सक्रिय होना था। विरोध का यह पक्ष विभिन्न स्त्रोतों से ऊर्जा प्राप्त कर जमीनी प्रकृति के सक्रियतावाद में रूपान्तरित हो गया।

ज्यूइश हाई हॉलीडेज द्वारा कहने पर विभिन्न नगर निगमों के अधिकारियों ने सड़कों को साफ करना प्रारम्भ करने का निर्णय लिया। तम्बुओं में रहने वाले विरोधियों को चेतावनी पत्र दे दिए गए। सुविधा–सम्पन्न मध्य वर्ग से सम्बन्धित विरोधियों जो कि समूची जनसंख्या के साथ जुड़े थे इन प्रदर्शनों के कारण सही अर्थों में गृह विहीन हो गए। जिन लोगों के पास सार्वजनिक आवास प्राप्त करने के अधिकार थे उन्हें नियम एवं शर्तों के अनुसार स्थान दिया गया और उनके नामों की प्रतीक्षा सूची निर्मित की गई। इन लोगों के लिए तम्बू प्रदर्शन के क्षेत्र नहीं थे बल्कि उन्हें ऐसे सम्मानित विकल्प दिए गए जहां रहकर और अपने परिवार सदस्यों के साथ अन्तःक्रिया करते हुए उन्हें विरोध प्रदर्शन के अवसर मिले।

इन प्रदर्शनकारियों का यह विरोध तीन दशकों से कार्यरत दक्षिणपंथी सरकारों के क्रिया–कलापों का तार्किक परिणाम था। 1977 से एक बहुत नियोजित एवं व्यवस्थित तरीके से कल्याणकारी राज्य को समाप्त कर नव्य उदारवादी शासन प्रणाली को स्थापित किया गया। सुरक्षा को चुनौति जोकि कभी वास्तविक थी और कभी जबरदस्ती निर्मित की गई थी के कारण जो भी गठबन्धन सरकार के रूप में उभरकर आए उन्होंने यह स्थापित किया कि नागरिकों में अनुशासन एवं समर्पण ही एकमात्र ऐसा तरीका है जिससे राष्ट्रीय हित पूरे किए जा सकते हैं। अनौपचारिक संगठन इस पक्ष को लेकर चिन्तित थे कि उन्हें इजरायल में तथा जबरदस्ती अधिकार में लिए गए क्षेत्रों में मानव अधिकारों की रक्षा हेतु निरन्तर संघर्ष करने पड़ रहे थे। न्यायालयों में असंगत प्रकृति के निर्णयों से उन्हें हाशिए पर लाया जा रहा था। इसके साथ–साथ दक्षिणपंथी प्रकृति के विधान उनके ऊपर तरीके से लागू किए गए थे।

इजरायल में सैकड़ों की संख्या में विभिन्न समीतियों ने अपने आप को सक्रिय नागरिक समाज के रूप में प्रस्तुत किया। इन समाजों के मध्य एकजुटता निर्मित करने का श्रेय इत्जिक नाम के व्यक्ति को जाता है जिसने रूई एवं चूजे की कीमतों के विषय में यह तुलना प्रस्तुत की कि इन वस्तुओं की कीमतें इजरायल में यूरोप एवं अमेरिका में उपलब्ध समान वस्तुओं की कीमत से बहुत ज्यादा हैं। फेसबुक पर अपने लेखन के माध्यम से इत्जिक ने ऐसी वस्तुओं के बहिष्कार का संचालन किया जिसके कारण इन वस्तुओं की कीमतों में कमी आई और साथ ही इस प्रयास ने मध्यवर्ग को विरोध के लिए प्रोत्साहित किया। जुलाई माह में यह विरोध स्वीकार हुआ जब डाफना लीफ को बाध्य होकर एक तंबू में रहना पड़ा क्योंकि वह मकान का किराया देने में सक्षम नहीं थी। सैकड़ों लोगों ने ऐसा ही किया।

अचानक 'किटुरिम' जोकि एक ऐसा खेल है जिसमें विभिन्न मित्र कमरों में बैठने, रहने, नाश्ता करने, हवा सम्बन्धी सुविधाएं, शिकायतें इत्यादि की समग्रता को प्रस्तुत करते हैं, का उभार हुआ। एक परम्परागत शुक्रवार की रात्रि को इजरायल में यहूदियों ने अपनी मांगों की तार्किक सूची के आधार पर जीवनयापन के अधिकार की मांग की। यह स्थिति किबुत्ज आन्दोलन जिसे टाउन मीटींग्स कहा जाता था कि याद दिलाती है जिसमें सहभागी लोकतन्त्र उपस्थित था। मैक्सिको एवं पोलैण्ड में सक्रिय नागरिक समाज के संयोजकों की तरह इजरायल में भी आन्दोलनकारियों ने आम जनता की आवाज को केन्द्र में रखकर अपनी शक्ति का विस्तार किया और आन्दोलन को प्रभावी बनाया। कुछ लोग इस बात पर भी बल दे रहे थे कि सरकार की अवधारणा के अन्तर्गत भी क्रान्ति की आवश्यकता है। इस बीच में सरकारी प्रवक्ताओं ने यह विचार प्रस्तुत किया कि आन्दोलन के मांग सम्बन्धी पक्षों पर हमारा ध्यान आकर्षित हुआ है और सरकार की समितियां उपयुक्त प्रतिक्रिया करेंगी लेकिन एक वर्ष से ज्यादा हो चुका है। चुनाव उस समय सम्पन्न हो गए थे और यह अभी सन्देहास्पद है कि वर्तमान सरकार उस सुस्थापित प्रारूप के परे जाएगी जो उसने चुनावी अर्थाशास्त्र की अल्पकाल अवधि के अन्तर्गत स्थापित किया है। ■

> एक असमान विश्व में समाजशास्त्र की प्रस्थिति से सम्बन्धित दस स्थापनाएँ

पिओटर स्टोम्पका, क्राकोव विश्वविद्यालय, पोलैण्ड, आई.एस.ए. के पूर्व अध्यक्ष

लगभग दस वर्ष पूर्व 2002 में ब्रिसबेन में आई.एस.ए. द्वारा आयोजित समाजशास्त्र के विश्व सम्मेलन में मैनें आई.एस.ए. की अध्यक्षता की जीत में ''राजनीतिक दृष्टि से त्रुटिपूर्ण'' एक नारे को स्थान मिलते हुए देखा था वह नारा था सन्तुलन की उपेक्षा एवं उत्कृष्टता को महत्व (सन्तुलन की बजाए उत्कृष्टता)। गोथनबर्ग में 2010 में हुई विश्व कांग्रेस में यह नारा एक बार पुनः महत्वपूर्ण हुआ है। इस विश्व सम्मेलन में माइकल बुराबे की महत्वपूर्ण यहां तक कि एकपक्षीय जीत ने आई. एस. ए. में क्रान्तिकारी विचारों को स्थापित किया है। ''वैकल्पिक'' एवं 'देशज' समाजशास्त्र, पश्चिमी पद्धतियों एवं सिद्धान्तों की दमनकारी प्रकृति एवं अंग्रेजी भाषा के साम्राज्यवाद सम्बन्धी विचारों ने इस क्रान्तिकारिता को व्यक्त किया है। शोध पत्रिका कन्टम्परेरी सोशियालॉजी (जुलाई 2011 पृष्ठ 388–404) में हमने इन विचारों के विपरीत अपने दृष्टिकोणों को प्रस्तुत किया है परन्तु इस दृष्टिकोण के कारण मेरे पक्ष के विषय में एक आधारभूत भ्रामक चिन्तन की स्थापना हुई है। मेरे को 'एक अन्तिम प्रत्यक्षवादी, अमेरिका का अन्ध समर्थक जैसे नामों से प्रस्तुत किया गया, जोकि किसी भी दृष्टि से मेरे सन्दर्भ में उपयुक्त नहीं है। मैं अपने पक्ष को अत्यन्त संक्षेप में विशिष्ट विचार के साथ प्रस्तुत करना चाहता हूं। मेरी यह दृष्टि दस बिन्दुओं में समाहित है। माइकल ने बड़ी उदारता के साथ मेरे इस विचार को ग्लोबल डायलॉग में प्रकाशित करने की स्वीकृति दी है जिसके लिए मैं उन्हें धन्यवाद देता हूं।

प्रथम बिन्दु इस तर्क से सम्बन्धित है कि किसी को भी विश्व की वास्तविक स्थितियों के माध्यम से ज्ञानमीमांसा केन्द्रित (एपिस्टेमोलॉजिकल) निष्कर्ष स्थापित नहीं करने चाहिए ना ही हमारे विषय की संस्थागत प्रस्थिति में विद्यमान मूर्त विवेक जो कि विश्व के विभिन्न भागों में पाए जाते हैं के आधार पर इस तरह के निष्कर्ष स्थापित करने चाहिए। अधिकांश समाजशास्त्री जिसमें मैं भी सम्मिलित हूँ अपने पेशे के प्रति संवेदनशील होने के कारण यह जानते हैं कि विभिन्न समाजों के मध्य तथा समकालीन समाजों के अन्तर्गत न्याय विरोधी असमानताएँ विद्यमान हैं। यह असमानताएं विभिन्न शोध अवसरों के क्षेत्र में भी विद्यमान हैं परन्तु इसका निहितार्थ यह नहीं है कि सुविधासम्पन्न एवं सुविधाओं से वंचित श्रेणियों के लिए भिन्न–भिन्न प्रकृति के समाजशास्त्र होने चाहिए। एक अच्छा समाजशास्त्र समान रूप से सक्षम होता है कि वह समृद्धि एवं निर्धनता दोनों को समझ सके।

दूसरा बिन्दु एक महत्वपूर्ण विचार के ठीक विपरीत है यदि आप असमान विश्व को परिवर्तित करने के इच्छुक हैं तो आपका प्रथम दायित्व है कि आप उसे समझें। मैं फिर यह कहना चाहूँगा कि अधिकाँश समाजशास्त्री जिसमें मैं भी सम्मिलित हूँ सुधार–अभिमुखित हैं लेकिन हमारे सक्रिय समाजशास्त्रियों की आकांक्षाएँ केवल नैतिकता को बताकर या उपदेश देकर या वैचारिक घोषणापत्र प्रस्तुत कर पूरी नहीं की जा सकतीं। हम अपनी आकांक्षाओं को तभी मूर्त रूप दे सकते हैं जब सामाजिक जीवन के विभिन्न तंत्रों एवं उनके क्रियाकलापों की खोज की जा सके और इसके साथ ही उन पक्षों को जाना जा सके जो असमानता एवं अन्याय को निर्मित करते हैं और उन्हें गहनता प्रदान करते हैं। कार्ल मार्क्स ने अपने जीवन का अधिकाँश हिस्सा एक वाचनालय में गुजारा। उन्हें कभी प्रतिबन्धों में नहीं रखा गया न ही उन्होंने अवरोधों की परवाह की और मार्क्स समाज विज्ञान में एक अग्रणी व्यक्तित्व बन गए। यह स्थिति उन्हें साम्यवादी घोषणापत्र (कम्यूनिस्ट मैनीफेस्टो) से प्राप्त नहीं हुई थी अपितु दास कैपीटल से प्राप्त हुई।

तीसरा बिन्दु इस विचार पर आधारित है कि अनेक सामाजिक विश्वों[1] के लिए एक समाजशास्त्र है। मानव प्रजाति के लिए सामाजिक जीवन से सम्बन्धित प्रणालियाँ एवं नियम व्यवस्थाएँ सार्वभौमिक हैं हालांकि उनकी अभिव्यक्ति विभिन्न सभ्यताओं, संस्कृतियों, समाजों और समाज के खण्डों में भिन्न–भिन्न प्रकार से होती है। बाद की स्थितियों में धीरे–धीरे वैश्वीकरण के कारण समरूपताएँ फिर उभर रही हैं।

> >

यह केवल वहाँ हो रहा है जहाँ अन्यायी प्रकृति की असमानताएं विद्यमान हैं। (उत्तर बनाम दक्षिण, केन्द्र बनाम परिधि, प्रजाति, लिंग एवं वर्ग–विभाजन जो कि विभिन्न समाजों में विद्यमान हैं) इन समाजों में उन्हें भी सम्मिलित किया जा सकता है जहाँ धार्मिक कट्टरपंथता पाई जाती है (आस्तिक बनाम नास्तिक)।

चौथा बिन्दु इस विचार पर आधारित है कि समाजशास्त्रीय अनुसंधान के मापक एवं अच्छे सिद्धान्त सार्वभौमिक हैं। हम इसमें विभिन्न पद्धतियों के प्रविधिमूलक तत्वों को तथा समाजशास्त्रीय सिद्धान्तों के बाहुल्यतावादी पक्षों को सम्मिलित करते हैं। यह तर्क प्रत्यक्षवाद से कहीं भी सम्बन्धित नहीं है क्योंकि गुणात्मक पद्धतियाँ और साथ–साथ निर्वचनात्मक सिद्धान्त आज प्रभावशाली हैं जो इस मान्यता को स्थापित करते हैं कि इनकी सामाजिक विषय पद्धति विशिष्ट हो सकती है परन्तु इनके लिए भी सार्वभौमिक मापकों की आवश्यकता है भले ही वे मापक उनसे भिन्न हों जो प्रत्यक्षवादी समाजशास्त्र से भिन्न हैं और अपने आप को प्राकृतिक विज्ञानों के अनुकरण के प्रयास से सम्बन्धित हैं।

पाँचवा बिन्दु इस तथ्य से सम्बन्धित है कि अस्तित्व से जुड़े हुए विभिन्न पक्ष वे चाहे सही हों अथवा गलत हमारे परिणामों को अस्वीकृत नहीं करते। यह ऐतिहासिक तथ्य है कि स्तरीकृत प्रविधियाँ एवं सिद्धान्तों के बाहुल्यतावादी स्वरूप के प्रारम्भ अनेक वृद्ध लोगों के द्वारा हुए हैं इनमें से अधिकाँशतः यहूदी थे जो कि जर्मनी, फ्रांस एवं ब्रिटेन में निवास करते थे फिर ये सिद्धान्त एवं प्रविधियां अधिकाँशतः पश्चिमी यूरोप में विकसित हुई। अधिकाँशतः यह अमेरिका में विकसित हुई। इन सबके विकास में आन्तरिक गुणों की कोई भूमिका नहीं है। यह भी तर्क दिया जा सकता है कि विकास के समूचे पक्ष हमेशा सन्देहास्पद अनुमानों, मूल्यांकन, सुधार एवं उन्नयन इत्यादि से प्रभावित रहे हैं लेकिन इन पद्धतिशास्त्रीय एवं सैद्धान्तिक परम्पराओं को साम्राज्यवादी कहकर अस्वीकार कर देना एक प्रकार का संकीर्णतावाद है। यहाँ मैं यह कहना चाहूंगा कि न्यूटन एवं मर्टन का यह विचार कितना समीचीन है कि हम एवं हमारा ज्ञान महापुरूषों अर्थात् ज्ञानविदों के कन्धों पर टिका हुआ है।

छठा बिन्दु इस तर्क पर आधारित है कि वैकल्पिक अथवा देशज समाजशास्त्र को निर्मित करने का गैर–जरूरी प्रयास विषय के लिए खतरनाक है। विज्ञान जिसमें समाजविज्ञान भी सम्मिलित हैं की कोई सीमा नहीं होती। ज्ञान की ये सभी विद्याएँ ज्ञान के सामान्य स्त्रोत से विकसित होती हैं जिसमें सभी राष्ट्रीय, महाद्वीपीय, क्षेत्रीय और यहां तक की स्थानीय समाजशास्त्र की विद्याएँ योगदान करती हैं और इस योगदान का स्वागत किया जाता है। हो सकता है कि समाजशास्त्र के इन विभिन्न पक्षों में विशिष्ट शोध अवसर हो सकते हैं। इनका विशिष्ट अनुसन्धान एजेण्डा हो सकता है। ये पक्ष विशिष्ट समस्याओं पर केन्द्रित हो सकते हैं, इनके अभिमुखन विशिष्ट हो सकते हैं लेकिन इसका कदापि अर्थ यह नहीं है कि इनके वैकल्पिक पद्धतिशास्त्र हों या

“समाजशास्त्र का भविष्य भी राष्ट्रीय समाजशास्त्रों से निर्धारित नहीं होगा अपितु अनुसन्धान समूहों से होगा”

इनके देशज सिद्धान्त हों। देशज समाजशास्त्र के तर्क की चेतना को प्रस्तुत करने वाले समाज वैज्ञानिकों को मेरी सलाह है कि वे सिर्फ समाजशास्त्र करें। गैर पश्चिमी विश्व में अनेक महत्वपूर्ण समाजशास्त्रीय अध्ययन हुए हैं एवं ये अध्ययन उन मापक पद्धतिशास्त्र एवं योगदानों पर आधारित हैं जो सार्वभौमिक हैं। साथ ही इसमें सार्वभौमिक सिद्धान्त भी सम्मिलित हैं। हमें वैकल्पिक अथवा देशज समाजशास्त्र के स्थान पर केवल अच्छे समाजशास्त्र को स्थापित करना है।

सातवाँ बिन्दु इस तर्क पर आधारित है कि राष्ट्रीय स्तर के समाजशास्त्र आज वैश्विक एवं तेज गति से उभर रहे महानगरीय सामाजिक विश्व में बहुत अधिक अर्थ नहीं रखते। तथ्य यह है कि विभिन्न देश या राष्ट्र–राज्य जो अनेक विशेषताओं के कारण भिन्न–भिन्न प्रकृति के हैं का यह अर्थ कदापि नहीं है कि उनके समाजशास्त्र भी भिन्न प्रकृति के होने चाहिऐं। यहां राष्ट्र का अर्थ केवल इस आशय से है कि यहाँ कुछ भिन्न प्रकृति की संस्थाएँ उपस्थित हैं अर्थात् संस्थागत भिन्नता यहां महत्वपूर्ण बन जाती है। इसके साथ–साथ इनके प्रवर्तक एवं अनुसन्धान के क्षेत्र भी भिन्न प्रकृति के हो सकते हैं। लेकिन जहाँ तक परिणामों का सवाल है समाजशास्त्र का नाम एक है। यहां क्षेत्रीय अध्ययन अथवा स्थानीय सांख्यिकीय तथ्य ही भिन्न हो सकते हैं लेकिन इनसे उत्पन्न होने वाला ज्ञान जो कि अमूर्त प्रकृति का बनेगा समाजशास्त्र के सामान्य ज्ञान क्षेत्र में जो कि सार्वभौमिक है में योगदान करेगा। आई. एस. ए. के साथ–साथ समाजशास्त्र का भविष्य भी राष्ट्रीय समाजशास्त्र से निर्धारित नहीं होगा अपितु अनुसन्धान समूहों अथवा समूह से निर्मित हुए जाल से सुनिश्चित होगा (आज हम इन्हें आर.सीज, टी.जीज. अथवा डब्ल्यू.जीज. के नाम से जानते हैं।)

आठवाँ बिन्दु इस ऐतिहासिक तथ्य पर आधारित है कि अंग्रेजी जोकि एक स्वाभाविक/प्राकृतिक भाषा है का योगदान हर क्षेत्र में महत्वपूर्ण है न कि उन कृत्रिम भाषाओं का अथवा उन भाषाओं का जिन्हें सृजित किया गया है (जैसे ऐस्पेरेन्टो)। अंग्रेजी संचार का एक महत्वपूर्ण उपकरण है जिसे एयरलाइन्स, पर्यटन, कम्प्यूटर, इंटरनेट एवं विज्ञान जिसमें समाजशास्त्र सम्मिलित है के व्यापक प्रयोग को देखा जा सकता है। अंग्रेजी का प्रयोग एक बड़ा अवसर प्रदान करता है न कि यह किसी प्रकोप अथवा विच्छेदन को उत्पन्न करता है। ऐसे समाजशास्त्री जो सीमित भाषा क्षेत्र में क्रियाशील हैं (जैसे मैं) अपने सार्वभौमिक समाजशास्त्रीय विरासत के ज्ञान के साथ सक्रिय होते हैं अथवा हुए हैं उन्हें यह ज्ञान अंग्रेजी में अनुवाद की गई पुस्तकों से मिला है। इस ज्ञान के साथ उनकी चेतना का विस्तार हुआ है और उन्हें यह अवसर मिला है कि वे ज्ञान के सार्वभौमिक स्त्रोत में योगदान कर सकें। उनका यह योगदान अंग्रेजी में हुए उनके प्रकाशनों से सम्भव हो सका है।

नौवां तर्क इस मत पर आधारित है कि यह विश्वास करना एक त्रुटि है कि अनुसंधानकर्ता की वर्तमान स्थिति उसे ज्ञानमीमांसायी लाभ प्रदान करती है। अन्याय एवं असमानता का तन्त्र एवं उससे सम्बन्धित नियम प्रणाली का खुलासा जरूरी नहीं कि वे ही लोग करें जो उस पक्ष को भुगत रहे हैं अथवा उसकी आन्तरिक प्रणाली के साथ जुड़े हुए हैं। ऐसे अनेक उदाहरण हैं जो इस विचार के ठीक विपरीत हैं। विज्ञान में वैधता एवं उसकी स्वीकार्यता परिणाम के गुणों पर आधारित होती है। इसका शोधकर्ता अथवा विचारक की सामाजिक प्रस्थिति से कोई सम्बन्ध नहीं होता।

दसवाँ बिन्दु इस तर्क पर आधारित है कि मूल्य केन्द्रित निर्णय एवं विचारधारायी पूर्वाग्रह अपरिहार्य हैं। इस स्थिति को समाजशास्त्र में प्रारम्भिक स्थिति पर स्वीकार करते हैं जैसे समस्या का चुनाव अथवा अनुसन्धान के प्रस्तावित मुद्दों का चुनाव लेकिन इस तरह के निर्णय एवं पूर्वाग्रहों का अन्तिम परिणामों एवं उनकी सत्यापनशीलताओं में कोई स्थान नहीं होना चाहिए। हमें गुन्नार मिर्डल के इस तर्क[2] को स्वीकारना चाहिए कि सभी मूल्य कहीं न कहीं सलाह के पक्ष से सम्बन्धित हैं और इसलिए इन पर खुली बहस की जानी चाहिए। मैंने इस संक्षिप्त विवेचन में इन दस पक्षों को आपके सामने प्रस्तुत करने का प्रयास किया है। ■

[1] देखें मेरा आलेख जो द आई. एस. ए. हैन्डबुक ऑफ डाइवर्स सोशियालॉजिकल ट्रेडिशन्स (सेज, 2010) का भाग है। इस पुस्तक को सुजाता पटेल ने सम्पादित किया है।

[2] आब्जेक्टिविटी इन सोशल रिसर्च (न्यूयार्क : पैन्थिओन बुक्स, 1969)

> उत्कृष्टता एवं सन्तुलन : अर्थपूर्ण एवं महत्वपूर्ण समाजशास्त्र की रचना

टीना उइस, जोहान्सबर्ग विश्वविद्यालय, दक्षिण अफ्रीका, राष्ट्रीय एसोशियेसन्स की आई.एस.ए. की उपाध्यक्ष

पिथोटर स्टोम्पका के एक आलेख एवं तत्पश्चात् ताईवान में सन् 2009 में अन्तर्राष्ट्रीय समाजशास्त्रीय समिति (इन्टरनेशनल सोश्यालिजकल एसोशियेसन–आई.एस.ए.) की राष्ट्रीय समितियों (नेशनल एसोशियेसन्स) की काउन्सिल की सम्पन्न हुई बैठक में कांफ्रेंस में प्रस्तुत किये गये शोध पत्रों के तीन खण्डों की समीक्षा में स्टोम्पका ने जो दृष्टिकोण प्रस्तुत किया और जिसे 'कन्टम्प्रेरी सोश्यालजी' में प्रकाशित किया गया और साथ ही इस प्रकाशन के प्रत्युत्तर में इस बैठक के संयोजक तथा नेशनल एसोशियेसन्स के आई एस ए के भूतपूर्व उपाध्यक्ष माइकल बुरावे की जो प्रतिक्रिया प्रकाशित हुई ने समाज शास्त्र जगत में एक महत्वपूर्ण बहस को जन्म दिया है। ताईवान की बैठक का मुख्य विषय 'एक असमान विश्व का सामना : वैश्विक समाजशास्त्र के लिए एक चुनौती' (फेसिंग एन अनइक्वुअल वर्ल्ड : चेलेन्जेज फॉर ए ग्लोबल सोश्यालजी) था जो कि 2014 में योकोहामा, जापान में होने वाली आई.एस.ए. की विश्व कांग्रेस का भी मुख्य विषय है।

स्टोम्पका के विपरीत मेरा मत है कि ये तीन खण्ड 'क्रान्तिकारी दृष्टिकोण' के साथ उभर कर नहीं आये हैं अपितु यह एक ऐसा प्रयास है जो 'केन्द्र' एवं 'परिधि' के मध्य ज्ञान सृजन एवं ज्ञान विनिमय के असमान संगठन को समझने का व्यापक परिदृश्य प्रदान कर सके।

इस परिप्रेक्ष्य में यह उपयोगी होगा कि आई.एस.ए. एवं राष्ट्रीय समितियों के साथ इसके सम्बन्ध के ऐतिहासिक तथ्यों की चर्चा की जाए। यूनेस्को के प्रयासों से सन् 1948 में जब आई.एस.ए. का गठन हुआ तो इसकी सदस्यता को केवल राष्ट्रीय समितियों तक ही सीमित रखा गया और इस कारण आई. एस.ए. का चरित्र सामूहिक प्रकृति का बना। 1970 में व्यक्तिगत सदस्यता को प्रारम्भ किया गया जिसके कारण आई. एस. ए. में अन्तर्राष्ट्रीय सहभागिता का विस्तार हुआ और शोध समितियों के विकास को मजबूती मिली। पर इसके कारण आई.एस.ए. की निर्णयकारी संरचना में राष्ट्रीय समितियों के प्रभाव का ह्रास हुआ और इनका महत्व कम हुआ। 1974–1978 की कार्यावधि के लिए जब आई.एस.ए. ने अपने उपाध्यक्षों को विभागों को आवंटित करने की प्रक्रिया प्रारम्भ की (शोध काउन्सिल, कार्यक्रम, सदस्यता एवं वित्त) तब राष्ट्रीय समितियाँ बड़े रहस्यपूर्ण ढंग से अनुपस्थित थीं। 1994 में बिलेफील्ड में सम्पन्न हुई विश्व कांग्रेस में आई.एस.ए. की मुख्य निर्णयकारी इकाई द काउन्सिल ऑफ नेशनल ऐसोशियेसन्स को प्रतिस्थापित कर शोध काउन्सिल एवं द काउन्सिल आफ नेशनल ऐसोशियेसन के मिश्रण से बनी एक असेम्बली ऑफ काउन्सिल्स को वह स्थान दे दिया गया।

आई.एस.ए. की स्थापना के प्रारम्भ से ही इसके अध्यक्ष के चुनाव में यूरोप का वर्चस्व रहा। यूरोप से दस एवं अमेरिका से पाँच अध्यक्षों का निर्वाचन हो चुका है। केवल ब्राजील के फरनान्डो कार्डोसो (1982–1986) एवं भारत के टी. के. ओमन (1990–1994) इसका अपवाद हैं। वर्तमान अवधि (2010–2014) के लिए बनी शोध समितियों के अध्यक्षों में उत्तरी विश्व का वर्चस्व है। स्टोम्पका यह तर्क दे सकते हैं कि यह सब कुछ संतुलन पर उत्कृष्टता के महत्व को दर्शाता है। रेविन कोनेल[2] एक भिन्न दृष्टिकोण ले सकती हैं। इसे एक ऐसी सामान्य प्रवृत्ति के रूप में प्रस्तुत किया जा सकता है जिसमें समाज विज्ञानों के सैद्धान्तिक पक्षों पर उत्तरी विश्व के वर्चस्व को स्वीकारा जाय। जबकि दक्षिणी विश्व केवल प्रदत्त संकलन एवं क्रियान्वन तक ही सीमित हो कर रह गया है। इसके परिणामस्वरूप 'महानगरीय प्रभुत्व एवं परिधि केन्द्रित सीमान्तता की समाज विज्ञान में स्थापना' का विचार उभर कर आया (2007:219)। इसके साथ अन्य कारकों की भी चर्चा की जा सकती है जैसे प्रकाशन सामग्री की प्रचुर उपलब्धता एवं उसके व्यापक वितरण के कारण उत्तरी विश्व में हुए अध्ययन सभी स्थानों पर जाने जाते हैं। स्नातक/उच्च अध्ययन के लोकप्रिय केन्द्रों एवं भाषा की व्यापक जानकारी/उपलब्धता के कारण भी उत्तरी विश्व का वर्चस्व स्थापित हुआ है।

आई.एस.ए. के नियमों के अनुसार, 'संगठन का उद्देश्य प्रत्येक स्थान पर विद्यमान समाज शास्त्रियों का प्रतिनिधित्व करना है चाहे वे किसी भी चिन्तन सम्प्रदाय, वैज्ञानिक उपागम

>>

अथवा विचारधारायी मत से क्यों न सम्बन्धित हों साथ ही समूचे विश्व में समाजशास्त्रीय ज्ञान को विकसित करना है। यह तर्क दिया जा सकता है कि आई.एस.ए. का यह नियम स्टोम्पका के उस संदर्भ–स्वतन्त्र विचार के विपरीत है जहाँ वे 'अनेक सामाजिक विश्व के लिए एक समाजशास्त्र' एवं 'समाजशास्त्रीय अनुसंधान एवं अच्छे सिद्धान्त के सार्वभौमिक स्तर/मापक' को स्थापित करते हैं। विशिष्ट संदर्भों में विकसित हुई समझ को सार्वभौमिक स्तर पर लागू नहीं किया जा सकता है विशेषतः तब जब कि ये संदर्भ उत्तरी विश्व के साथ ही सीमित हों।

अनेक वर्षों से आई.एस.ए. सक्रियता के साथ अपने उद्देश्य को वास्तविकता का रूप देने की कोशिश में संलग्न है। 1998 में सम्पन्न आई.एस.ए. की विश्व कांग्रेस के पहले तत्कालीन आइ.एस.ए. अध्यक्ष इमेन्युअल वालेस्ट्राइन द्वारा दस क्षेत्रीय कांफ्रेन्सेज का आयोजन इसका एक उदाहरण है। ये सभी कांफ्रेन्सेज क्षेत्रीय परिप्रेक्ष्य के माध्यम से विश्व समाजशास्त्र की स्थिति को समझने पर केन्द्रित थीं। आई.एस.ए. को सन्तुलन स्थापित करने की दिशा में मुख्य उपलब्धि तब प्राप्त हुई जब निर्णयकारी संरचना के अन्तर्गत भारत की सुजाता पटेल को सन् 2002 में नेशनल एसोशियेसन्स के लिए उपाध्यक चुना गया। आई.एस.ए. के नियमों से सम्बन्धित आवश्यकताओं को पूरा करते हुए यह प्रक्रिया भी प्रारम्भ की गयी कि शोध काउन्सिल की भाँति नेशनल एसोशियेसन् की काउन्सिल की आइ.एस.ए. की विश्व कांग्रेस के मध्य चार

"क्या हमारे 'एक विज्ञान' में असहमतियों के लिए स्थान है?"

वर्षों में एक बैठक आयोजित हो। सन् 2005 में इसके अनुरूप ऐसी पहली बैठक मियामी, अमेरिका में आयोजित की गयी। इस बैठक में हुए विमर्शों के परिणामस्वरूप सन् 2010 में सुजाता पटेल द्वारा सम्पादित पुस्तक जिसका शीर्षक 'आई एस ए हैण्डबुक ऑफ डायवर्स सोश्यिलिजकल ट्रेडीशन्स्' है का प्रकाशन किया गया।[3]

हम यह कह सकते हैं कि कुछ ऐसे सिद्धान्त एवं पद्धतितन्त्र हैं जो हमारे ध्यान में प्रतियोगिता करते रहते हैं। ठीक इसी प्रकार कुछ ऐसे विश्वदृष्टिकोण भी हैं, ये दृष्टिकोण पहले वाले सिद्धान्त एवं पद्धतिशास्त्र भी हो सकते हैं। कुछ स्थितियों में ध्यान आकर्षित करने का यह स्वरूप देशज समाजशास्त्र, लैंगिक प्रस्थिति, वर्ग, नृवंशीयता एवं आयु। ये सभी पक्ष सिद्धान्त के साथ जुड़ते हैं। समाजशास्त्र के लिए सबसे बड़ी चुनौति यह है कि इन सभी विभेदों को एक व्यापक परिप्रेक्ष्य के अन्दर किस प्रकार रखा जाए (समाजशास्त्र एवं आई.एस.ए.) यदि लोग यह महसूस नहीं करते हैं कि उनको सुनने का प्रयास नहीं किया जा रहा है तो भी वहाँ से चले जाएंगे इसलिए हमारे 'एक विज्ञान' में असहमतियों को एवं भेदों को सुनने की एवं उन्हें समझने की इच्छाशक्ति होनी चाहिए और ये प्रयास सम्मिलित होने चाहिऐं कि उन सबको सुना जाए।

आई.एस.ए. की नेशनल एसोशिएशन्स की काउन्सिल की आगामी बैठक सन् 2013 में होगी और यह एक महत्वपूर्ण अवसर होगा कि हम एक ऐसे स्पेस को प्रस्तुत करें जहाँ उपरोक्त उद्देश्य की पूर्ति हो सके। हमें यह सम्भव बनाना होगा कि वास्तविक प्रकृति के विमर्श हों एवं वैचारिक विवादों को समानता के तत्व के साथ स्थान दिया जाए। सभी देशों एवं क्षेत्रों के समाजशास्त्रियों के लिए जो विषय एवं उपागम उन्हें महत्वपूर्ण लगते हैं, एक ऐसा स्पेस मिले, जहाँ विस्तृत चर्चा हो सके। इस प्रकार से हम यह सुनिश्चित कर सकते हैं कि समाजशास्त्र के विकास में हमने उत्कृष्टता एवं सन्तुलन को स्थानीय स्तर पर एवं वैश्विक स्तर पर स्थापित कर लिया है अथवा स्थापित करने का प्रयास किया है। ■

[1] For a fascinating account of the history of the ISA see: Platt, J. (1998)A *Brief History of the International SociologicalAssociation: 1948-1997*. Montreal: ISA. http://www.isa-sociology.org/history-of-isa.htm

[2] Connell, R. (2007) *Southern Theory*. Cambridge: Polity Press.

[3] Patel, S. (ed.) (2010) *ISA Handbook of Diverse Sociological Traditions*. London: Sage.

> 'रोगी को अस्पताल में भर्ती करने से इन्कार' अथवा 'समाजशास्त्र की रक्षा में'

निकिता पोकरोवस्की, स्टेट यूनिवर्सिटी–हायर स्कूल ऑफ इकोनॉमिक्स, मॉस्को, सोसाइटी ऑफ प्रोफेशनल सोशियालॉजिस्ट के अध्यक्ष, रूस, आई. एस. ए. की कार्यकारी समिति की सदस्य।

अन्तर्राष्ट्रीय समाजशास्त्र एवं पेशेवर समाजशास्त्र के क्षेत्र में अनेक वर्ष व्यतीत करने के उपरान्त मेरी यह मजबूत धारणा बनी है कि आज के विश्व में समाजशास्त्र का भविष्य गंभीर रूप से खतरे में है। इसका भविष्य अनिश्चित है एवं हमारे पेशे से जुड़े हुए विभिन्न स्तर पहले की तुलना में आज कहीं ज्यादा बिखरे हुए हैं। मैं अपने विचार को अपनी आन्तरिक अनुभूति एवं अनुमानों/आभास के आधार पर तार्किक रूप देने की कोशिश करूंगा। ''क्या हमें वास्तव में समाजशास्त्र को बचाने की आवश्यकता है? यदि हाँ तो किनसेद्य और अब क्यों?'' इन प्रश्नों को मैं अपने आपसे जब पूछता हूँ तब उसमें रूस, मेरा गृह देश एवं अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र सभी सम्मिलित हो जाते हैं। मेरी दृष्टि में समाजशास्त्र को गंभीर चुनौति न केवल बाह्य पक्षों से है अपितु यह चुनौति हमारे अपने पेशेवर समूहों के अन्दर से भी उभर रही है।

> बाहर से खतरा और उसका स्वरूप

बाह्य पक्षों से खतरा एक महत्वपूर्ण चुनौति के कारण हैं। अगर मैं अपनी बात सीधे तरीके से रखूँ तो यह कहा जा सकता है कि आज के विश्व में समाजशास्त्र का प्रभाव एवं उसकी सत्ता में बहुत तीव्र गति से ह्रास हो रहा है। न तो शक्ति संरचना (जिसमें राज्य एवं व्यवसाय/वाणिज्य प्रमुख हैं) और न ही जनसंख्या की रूचि है कि वे समाज में व्याप्त उपचारमूलक स्थितियों का तार्किक विश्लेषण करें। इसके स्थान पर अनेक गैर–तार्किक शक्तियाँ ऐसे प्रयास करने लगी हैं।

प्राचीन एवं उत्पन्न हो रहे नवीन प्रकृति के धर्म सामाजिक अन्धविश्वास विचारधाराएं एवं जनता के द्वारा अन्धानुकरण प्रत्येक समाज में हर स्तर पर शक्तिशाली रूप से उभरा है। इन शक्तियों ने बिना किसी कठिनाई के तार्किकता को पीछे कर दिया है। यहां तक कि समाजविज्ञानों को भी पीछे किया है। ऐसी स्थितियों में समाजशास्त्र का तार्किक एवं अकादमिक स्वरूप तीव्र गति से ह्रास की तरफ है। मेरे मतानुसार तर्क ही एकमात्र वह आधार है जिससे समाजशास्त्र की शक्ति एवं उसकी क्षमता सुनिश्चित होती है। हम समाजशास्त्री समाज का विश्लेषण करते हुए उपचारात्मक प्रयास भी कर सकते हैं लेकिन धीरे–धीरे यह उभर रहा है कि रोगी अथवा परामर्श लेने का इच्छुक अर्थात् हमारा समाज चिकित्सालयों में दाखिला लेने से इन्कार करने लगा है अथवा इन्कार को चुनने लगा है। बिना समाजशास्त्रीय उपचार के हमारे समाजों को अच्छा महसूस होता है जबकि यह तथ्य है कि समाज रूपी इस रोगी की स्थिति अनेक स्थितियों में वास्तव में बहुत गंभीर है। दूसरे शब्दों में समाजशास्त्र को बाहय खतरा इस धारा से है जिसके अन्तर्गत समाज ने वर्तमान स्थितियों को अस्वीकृति प्रदान करना प्रारम्भ किया है। यह वह स्थिति है जहाँ रोगी अस्पताल में दाखिला लेने का इच्छुक नहीं है अथवा दाखिला लेने से इन्कार करता है।

> आन्तरिक पक्षों से खतरा

यह कोई आश्चर्यजनक तथ्य नहीं है कि समाजशास्त्र आन्तरिक चुनौतियों से उत्पन्न खतरों को भी महसूस कर रहा है। ये आन्तरिक चुनौतियां भी बाहय परिदृश्य से सम्बन्धित हैं। अनेक समाजशास्त्रियों एवं समाजशास्त्रीय समुदायों ने यह स्वीकार लिया है कि उनकी सामाजिक भूमिका एवं जनता के बीच में उनका महत्व बड़ी तेजी से कम हुआ है और इसलिए उन्होंने समाजशास्त्र को एक 'सामाजिक शक्ति' के रूप में बदल दिया है जिसका अभिप्राय एक अच्छे समाज की स्थापना के लिए व्यापक सामाजिक आन्दोलन की तरह है। समाजशास्त्र की अवधारणाओं में उत्पन्न हुआ यह परिप्रेक्ष्य अकादमिक दक्षता एवं उच्चस्तरीय शिक्षण/ज्ञान को पीछे ले आता है और जन सेवा के रूप में समाजशास्त्र के महत्व को बलवती बना देता है। ''समाजशास्त्रियों ने विभिन्न परिप्रेक्ष्यों में विश्व की विवेचना की है पर मुख्य सवाल तो इसको बदलने का है।'' मार्क्स ने इस महत्वपूर्ण वक्तव्य को मैंने नए शब्द प्रदान किए हैं वास्तव में जिन लोगों का यह लक्ष्य है कि वे आज समाज को परिवर्तित करें, इसके पहले अपनी अकादमिक, क्षमताओं के आधार पर हमने समाज को समझा और उसकी विवेचना की। परिवर्तन के इच्छुक समाजशास्त्रियों के लिए ज्ञान के पूर्व क्रिया उपस्थित हो जाती है। क्या हम इसे स्वीकार कर सकते हैं ? मैं इसे स्वीकार नहीं कर सकता। क्योंकि एक साधारण सी बात है कि रूस जैसे देश में जिसे हम अच्छी तरह जानते हैं 1917 से जो पूर्व इतिहास शुरू हुआ उसका क्या अर्थ था। विश्लेषण की प्रक्रिया के पूर्व भी समाज को आमूल–चूल रूप से पुनर्रचित कर दिया गया।

> हमें क्या करना चाहिए और क्या नहीं करना चाहिए

मैं इस तर्क से सहमत हूं कि समाजशास्त्रियों का स्थान सार्वजनिक। राजनीतिक अवरोधों से सम्बद्ध नहीं है क्योंकि उसने एक वैज्ञानिक के रूप में समाज को समझने और उसे व्यक्त करने का दायित्व ग्रहण किया है। हां, यह जरूर है कि एक समाजशास्त्री अनेक अवसरों पर किसी सार्वजनिक उद्देश्य की प्राप्ति हेतु सामाजिक एवं राजनीतिक योद्धा के रूप में अर्थात् सक्रिय कार्यकर्ता के रूप में योगदान कर सकता है लेकिन वह स्थिति तत्काल उसे एक विज्ञान के रूप में समाजशास्त्र विषय का प्रतिनिधित्व करने के अधिकार से वञ्चित कर देती है। हमें समाज के उपचारात्मक पक्षों में सहभागिता करने की आवश्यकता नहीं है क्योंकि उपचारात्मकता विश्लेषण की प्रक्रिया से बिल्कुल भिन्न है। ऐसी अनेक सामाजिक संस्थाएं हैं जिनका मुख्य लक्ष्य समाज का उपचार करना है जैसे–राज्य, राजनीतिक क्षेत्र, जनसंगठन, जन आन्दोलन, प्रेस, जनमत इत्यादि। इन उपचारात्मक प्रक्रियाओं से जो भी सम्बद्ध है वह इस पक्ष को भली भाँति जानता है कि उपचारात्मक प्रणाली में अनेक प्रकार की भूमिकाएं होती हैं। साथ ही बीमारियों को जानने की प्रणाली से सम्बन्धित भूमिकाएं जटिल एवं व्यापक होती हैं और उपचार की निर्णायक सफलता इस तथ्य पर आधारित होती है कि जांच कितनी सही एवं सुनिश्चित है। लेकिन जांच को इलाज नहीं बनाया जा सकता और न ही इसे इलाज में जोड़ना चाहिए क्योंकि इलाज के विभिन्न तरीके हैं जिनका सम्बन्ध उन क्षेत्रों में विद्यमान विशेषज्ञों से है हमें निश्चित रूप से विश्व को बदलने की प्रक्रिया में योगदान करना चाहिए और यह योगदान हम कर भी सकते हैं इस हेतु जरूरी है कि हम अपने पेशे से सम्बन्धित अकादमिक लक्ष्यों पर स्वयं को केन्द्रित करें, समाजशास्त्रीय संस्कृति को विस्तार दें और अपने समाजों में इस संस्कृति को और चेतना को शिक्षा एवं जनसंचार माध्यमों द्वारा लोगों तक

> **"निदान ना तो इलाज हो सकता है और ना ही इससे जोड़ा जाना चाहिए"**

पहुँचाएँ। हमारा यह प्रयास ही ''समाजशास्त्र का जन लक्ष्य (पब्लिक मिशन)'' है। अन्यथा हम कहीं न कहीं उस अन्धेपन का शिकार हो जाएंगे जो अन्धेपन के शिकार लोगों को दिशा प्रदान करेगा। अपने इस वक्तव्य के द्वारा मैं पियोटू साइटोंका के समाजशास्त्र के पक्ष में प्रस्तुत किए गए दस बिन्दुओं का समर्थन करता हूं। उनके लिए और साथ ही मेरे लिए एक वैज्ञानिक विषय के रूप में समाजशास्त्र का सम्बन्ध मुख्यतः अकादमिक दक्षता के एवं पेशे से सम्बन्धित गुणवत्ता के निरन्तर शक्तिशाली होने की प्रक्रिया से सम्बन्धित हैं। इसके अतिरिक्त अन्य कोई भी विचार प्रश्नवाचक एवं विवादास्पद है। ■

> अकादमिक आश्रितता

फरनान्डा बीगल, कान्सीजो नेश्यिोनाल द इन्वेस्टिगेसियोनेस साइन्टिफिकास य टेक्नीकास यूर्निवसिदाद नेश्यिोनाल द क्यो, मैन्डोजा, अर्जेन्टीना।

समाजशास्त्र के समाजशास्त्र को एक विचारधारायी प्रयास का रूप देने के प्रयास में पिओटर स्टोम्पका ने अकादमिक आश्रितता, बौद्धिक साम्राज्यवाद एवं उपनिवेशवाद के मिश्रण को समाजशास्त्र के अन्तर्गत् विकसित किया है। इन सबको एकताबद्ध, गैर आलोचनात्मक प्राकृतिकता एवं एव आज्ञाकारिता की तरह किसी पक्ष को बिना सवाल किये अस्वीकृत करने के तत्वों के साथ इस मिश्रण को इस तरह रूप दिया गया है कि 'हमारे वैश्वीकृत समाज में आधारभूत प्रकृति के बाहय विभाजन को अभिव्यक्ति मिल जाती है' (2011 : 389)। स्टोम्पका ने अनादर वाली भाषा को प्रयुक्त किया है। यदि इस पक्ष को छोड़ भी दें (यह भाषा परिधिमूलक विचारकों एवं उनके लेखन हेतु प्रयुक्त की गयी है) तब भी मेरा प्रथम तर्क यह है कि विज्ञान के आलोचनात्मक अध्ययन का एक लम्बा इतिहास है। उत्तरी एवं दक्षिणी विश्व में ये अध्ययन 20वीं शताब्दी के मध्य में उभरे। विशेषतः इस पृष्टभूमि के साथ इनका उभार हुआ जो शीत युद्ध के उबाल से जुड़ा है। इस कारण विज्ञान (विशेषतः समाज विज्ञानों) के अध्ययनों में तीव्रता पनपी। आज अकादमिक आश्रितता के विभिन्न पक्ष हैं। वर्तमान समाजशास्त्र के अन्तर्गत इस आश्रितता का अपने आप में एक पैराडिम है। स्टोम्पका ने स्वयं आज के समाजशास्त्र के इस पक्ष को 'एव बहु–पैराडिमिक विषय' बता कर प्रस्तुत किया है (2010 : 22)।

अनुसंधान क्षेत्र के रूप में अकादमिक आश्रितता को विज्ञान के सामाजिक अध्ययन, आलोचनात्मक ज्ञान मीमांस एवं उच्च शिक्षा में तुलनात्मक अध्ययन के माध्यम से बढ़ावा मिला है। यह पक्ष ज्ञान के सृजन एवं उसके बहाव की असमान संरचना के परे जाता है। यह असमान संरचना अन्तर्राष्ट्रीय वैज्ञानिक व्यवस्था के साथ साथ ऐतिहासिक रूप में उभर कर आयी। यह संरचना संस्थागत, भौतिकवादी एवं प्रतीकात्मक प्रक्रियाओं, जो परस्पर सम्बन्धित हैं, से निर्मित होती हैं। इन प्रक्रियाओं ने बौद्धिक ज्ञान विधाओं का विकास विभिन्न दिशाओं में किया है। परिधि मूलक संदर्भ में ये सभी युग्म या समिश्रण अन्तर्राष्ट्रीयकरण को दिये गये राष्ट्रीय एवं क्षेत्रीय प्रत्युत्तरों के ऐतिहासिक परिणाम हैं। इस समझ में राज्य की उस भूमिका को भी जानना आवश्यक है जो वैज्ञानिक विकास एवं उच्च शिक्षा के क्षेत्रों से सम्बद्ध है।

ऐसे अध्ययनों की कमी नहीं है जो वैज्ञानिक अनुसंधान एवं विदेशी अनुदान, प्रकाशन प्रक्रिया एवं कम उपलब्ध साधन/ज्ञान स्त्रोत के सम्बन्धों को दर्शाते हैं। इसके अलावा विभिन्न विषयों के मध्य पनपी असमान प्रतिष्ठा एवं संस्थाओं के मध्य असमान प्रतिष्ठा एवं भेद को प्रस्तुत करने वाली शोध की क्षमताओं तथा विषमरूपीय अकादमिक गतिशीलता के मध्य सम्बन्धों को व्यक्त करने वाले अनेक अध्ययन उपलब्ध हैं। इस अनुसंधान क्षेत्र के अन्तर्गत हम बौद्धिक आश्रितता, यूरोपीय–केन्द्रितता एवं उपनिवेशवाद की प्रक्रियाएं जो कि ज्ञान के सृजन की प्रणाली के अन्तर्गत हैं के विश्लेषण पाते हैं। ये अध्ययन आलोचनात्मक परिप्रेक्ष्य के साथ आश्रितता विश्लेषण एवं लातिन अमेरिकन संरचनात्मकतावाद के सम्मिलन को प्रस्तुत करते हैं। ये दोनों परम्परायें मुख्यतः अर्थशास्त्र एवं राजनीतिशास्त्र से सम्बद्ध हैं। 1970 के दशक के उत्तरार्द्ध में एडवर्ड शील्स, जोजफ बेन डेविड एवं फिलिप अल्तबैक के मुख्य अध्ययनों में उन विशिष्ट कारकों पर बल दिया गया है जो अकादमिक क्षेत्रों में अधीनस्थता के तन्त्र को स्थापित करता है। 1988 में फैड्रिक गेरियो ने 'इन्टरनेशनल सोश्योलोजी' में एक महत्वपूर्ण लेख में यह तर्क दिया कि पश्चिमी विश्व से निर्देशित समाज विज्ञान जब 'सत्य' को निर्मित करती है तो तृतीय विश्व का उसमें केवल आंशिक सम्मिलन होता है। यह एक ऐसा तथ्य है जो वस्तुपरकता पर गम्भीर सवालिया निशान लगाता है। इन्टरनेशनल एनसाइक्लोपीडिया ऑफ द सोश्यल सांइसेज' का विश्लेषण करते हुए उनका मत है कि 98.1 प्रतिशत लेखक इस ग्रन्थ की श्रंखला में उत्तर अमेरिकन अथवा यूरोपीय विश्वविद्यालयों विशेषतः ब्रिटेन, फ्रांस एवं जर्मनी से सम्बद्ध हैं।

हाल के अध्ययन यह दर्शाते हैं कि समाजशास्त्रीय अनुसंधान के 'सार्वभौमिक स्तर' एवं 'अच्छा सिद्धान्त' के 'सार्वभौमिक स्तर' को उस अन्तर्राष्ट्रीय प्रकाशन व्यवस्था ने निर्मित किया एवं वैधानिकता प्रदान की जिसे 1950 के दशक में यूजीन गारफील्ड ने प्रारम्भ किया था। अनेक दशकों तक 'सोश्यल साइन्स साइटेशन इन्डैक्स' में की जाने वाली क्रम विन्यास (रैंकिंग) प्रणाली पर अमेरिकन एवं यूरोपीय शोध पत्रिकाओं का वर्चस्व रहा। धीरे धीरे अकादमिक प्रतिष्ठा संकेन्द्रित होती गयी एवं अन्तर्राष्ट्रीय संस्तरण का एक स्वरूप उभर कर आ गया। प्रतिष्ठित अकादमिक संस्थानों में पूरे हो रहे शोध कार्यों को उन संस्थानों में सम्पन्न हो रहे शोध कार्यों से पृथक कर दिया गया जो सीमान्त चरित्र के थे। ज्ञान एवं प्रकाशन के क्षेत्र में भी ये पृथक्करण स्थापित हो गया। अनेक परिधि मूलक देशों में वैज्ञानिक सृजन एवं उत्पादन में तीव्र वृद्धि के बावजूद यह संस्तरण सशक्त बना हुआ है। लातिन अमेरिका, एशिया एवं अफ्रीका वर्तमान

>>

में एस. एस. सी. आई. में प्रकाशित होने वाले लेखों में 20 प्रतिशत से कम योगदान करते हैं (बीगल, 2011)[1]। परिणाम स्वरूप परिधि मूलक समाजशास्त्र के लिए अकादमिक स्वायत्तता एक जटिल एवं अत्यन्त कठिन लक्ष्य बन गया है जबकि फ्रांसीसी समाजशास्त्र या अमेरिकन समाजशास्त्र के लिए यह अत्यन्त आसान एवं निश्चित रूप से प्राप्त किया गया लक्ष्य बन गया है।

विश्व समाज विज्ञान प्रतिवेदन (द वर्ल्ड सोश्यल साइंस रिपोर्ट) (यूनेस्को, 2010) में यह बताया गया है कि संस्थागत संरचनाओं में असमानता, अनुवाद की क्षमतायें एवं भौतिक संसाधनों के स्त्रोत अकादमिक जीवन के सशक्त निर्धारक हैं। सहयोगी प्रकृति के अनुसंधानों में आज भी वर्चस्व उत्तर–उत्तर की सहभागिता का है। दक्षिण–दक्षिण के लेखों की भागेदारी बहुत कम है (2010:146)। हेलब्रोन का कथन है कि केन्द्रीय अकादमियों द्वारा सृजित किये गयी प्रतीकात्मक वस्तुएं (आलेख/शोध इत्यादि) जो अंग्रेजी में लिखी गयी हैं की आश्चर्यजनक रूप से अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर उपलब्धता संख्या के स्तर पर बहुत अधिक है जबकि अनेक प्रभुत्वशाली भाषाओं (स्पेनिश, पुर्तगाली, अरबी, रूसी) के प्रकाशनों की उपलब्धता संख्या के स्तर पर कम है। इन प्रभुत्वशाली भाषाओं के प्रकाशनों की निर्यात दर अत्यन्त निम्न है यहां तक कि यह शून्य स्तर की है। स्थापित/मान्य अनुसंधान केन्द्रों के द्वारा प्रकाशित प्रतिष्ठित शोध पत्रिकाओं की तुलना में इन भाषाओं की पत्रिकाओं की पहुँच लोगों तक न्यूनतम है चाहे वे पत्रिकायें कितनी ही प्रतिष्ठित क्यों न हों। यह भी इस प्रतिवेदन में बताया गया है कि परिधि मूलक सर्किट विदेशी आयात को घटाने की क्षमता रखता है एवं देशज प्रकाशन/सृजन जो कि अवधारणाओं एवं सिद्धान्तों से सम्बद्ध है, में

> **"वास्तव में पश्चिम में और 'शेष विश्व' में अनेक समाजशास्त्र विद्यमान हैं"**

वृद्धि करने में सक्षम है परन्तु अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर संख्या की दृष्टि से इनकी उपलब्धता में वृद्धि करना इनके लिए अत्यन्त कठिन है। विशेषतः समाज विज्ञानों के क्षेत्र में ये परिधि मूलक केन्द्र प्रभावशाली स्थिति में दक्षिणी क्षेत्रों में स्थापित हो गये हैं परन्तु वैश्विक समाज शास्त्र में इनकी स्थिति अब भी अधीनस्थ प्रकृति की है (बीगल 2010)।

अभी उन सम्भावनाओं एवं दिशाओं को लेकर एकमत्यता नहीं है जिनसे अकादमिक निर्भरता की स्थिति को समाप्त किया जा सके। एक व्यक्तिगत स्कॉलर (बुद्धिजीवी) की दृष्टि से अन्तर्राष्ट्रीय स्तर की स्नातक/उच्च शिक्षा एवं अग्रेंजी भाषा में प्रकाशन से निःसन्देह अकादमिक मान्यता सफलतापूर्वक प्राप्त हो जाती है और करियर निर्माण में तीव्र गति का उन्नयन होता है हालांकि प्राकृतिक विज्ञानों के सन्दर्भ में यह मत अधिक सटीक है। वैज्ञानिक पूंजी के संकेन्द्रण का यह मार्ग जो कि व्यक्तिगत प्रकृति का है, आवश्यक नहीं कि परिधिमूलक समाजों में व्यापक वैज्ञानिक विकास का माध्यम बने।

पश्चिमी समाजशास्त्र एवं देशज समाजशास्त्र के विपरीत चरित्र पर मैं एक अन्तिम तर्क और देना चाहूंगा। इस संदर्भ में स्टोम्पका के द्वारा ली गयी दो वैचारिकी ने 'समरूपीय स्टीरियोटाइप' की स्थिति को स्थापित कर दिया है। परिधियों में व्याप्त समाजशास्त्र एक नवीन प्रघटना नहीं है। इसका अपना एक इतिहास है और इस के मध्य में भी विपरीत प्रकृति की स्थितियाँ हैं। देशज ज्ञान की स्थिति को लेकर अनेक बड़ी प्रकृति की बहस विद्यमान हैं। इसके साथ ही विभाजन की स्थिति इस तर्क को मान्यता देने में असफल है कि आलोचनात्मक परिप्रेक्ष्य जो कि पिछले पचास वर्षों से पश्चिमी समाज के अन्तर्गत सक्रिय है उपयोगी हो सकता है। वास्तव में पश्चिम में और 'शेष विश्व' में अनेक समाजशास्त्र विद्यमान हैं। ■

[1] मैंने एस.एस.सी.आई. के सम्मुख खुली उपलब्धता/प्राप्ति से सम्बद्ध आन्दोलन की बढ़ती चुनौतियों का अध्ययन किया है एवं अन्य मुख्य धाराओं के सम्मुख साइटेशन संकेतकों की विवेचना की है। इसके साथ ही ठीक इस स्थिति के विपरीत वैकल्पिक शोध पत्रिकाओं एवं डाटा बेसेज के अन्तर्गत् अन्तर्राष्ट्रीय प्रकाशन के स्तरों सम्बन्धी बहस को भी अध्ययन का केन्द्र बनाया है (बीगल, 2011)।

References

Beigel, F. (2010) "Social Sciences in Chile (1957-1973).A laboratory for an autonomous process of academia-building." Pp.183-212 in*Academic Dependency in the Social Sciences: Structural Reality and Intellectual Challenges*, edited by S. F.Alatas and K. Sinha-Kerkoff. New Delhi: Manohar.

Beigel, F. (2011) "Científicos Calibanes. Las ciencias sociales latinoamericanas en la encrucijada del sistema académico mundial". Valparaíso, IV Congreso Chileno de Sociología.

Gareau, F. (1988) "Another type of third world dependency: the social sciences," *International Sociology* 3(2): 171-178.

Sztompka, P. (2010) "One Sociology or many?" Pp.21-28 in *The ISA Handbook of Diverse Sociological Traditions*, edited by S. Patel. London: SAGE.

Sztompka, P. (2011) "Another Sociological Utopia," *Contemporary Sociology* 40(4): 388-396.

UNESCO. (2010) *World Social Science Report. Knowledge Divides*. Paris: UNESCO.

आज के असमान विश्व में समाजशास्त्र की रचना एवं प्रस्तुतीकरण

हेल्गा नोवोट्नी, यूरोपियन शोध परिषद की अध्यक्ष, वैज्ञानिक सलाहकार मण्डल की अध्यक्ष, वियेना विश्वविद्यालय, आस्ट्रिया, आई.एस.ए. की आजीवन सदस्य

इक्कीसवीं सदी में समाजशास्त्र अपने आप को एक असमान विश्व में पाता है। लेकिन अब समाजशास्त्र के पास अधिक बौद्धिक और वैज्ञानिक संसाधन हैं और मुझे यह विश्वास करना पडा जब मैंनें पिओटर स्टोम्का और माइकल बुरावे के मध्य एक उत्तेजक बहस को पढा। मुझे तीन कारण गिनाने दीजिये।

1. वैश्विक विज्ञान और इसके असमान अवसर

सीमान्त अनुसंधान के जटिल जमावडे, प्रोद्योगिकी, उसकी क्षमता और वास्तविक उपयोग से विज्ञान एक वैश्विक उद्यम बन गया है। अधिकतर सरकारें द्वारा आर्थिक विकास की वाहक, राष्ट्रीय प्रतिष्ठा और सैन्य दबदबा कायम करने के कारण विज्ञान और प्रोद्योगिकी के द्वारा हमारी दुनिया के परिवर्तन की दर एक अभूतपूर्व स्तर पर पहुंच चुकी है। इस प्रकार मानवीय हस्तक्षेप के परिणाम जटिलताओं के नये स्तर पर हैं, जिनके साथ नई अनिश्चितताऐं और जानी पहचानी वैश्विक और स्थानीय समस्याऐं भी आ रही हैं।

समाज विज्ञान और मानविकी और विशेष रुप से समाजशास्त्र को चुनौतियाँ दी गई हैं कि वह अपने स्वंय के मूल स्वरुप पर पुर्नविचार करे कि मानव के लिए उसका क्या अर्थ है; किस प्रकार प्रोद्योगिकी व मानव की दशा में सामन्जस्य स्थापित किया जाना है; तथा ऐसा जीवन के कैसे सामुदायिक रुप में किया जा सकता है। सामाजिक तथा प्राकृतिक सहउत्पादन क्रम के सम्बन्ध में विज्ञान और प्रोद्योगिकी अध्ययनों के दावों को देखने के पश्चात, सूचना, ज्ञान, शिक्षा और प्रजातान्त्रिक भागीदारी पर असमान पहुँच से सम्बन्धित प्रश्न – शायद काल्पनिक – वैश्विक वैज्ञानिक नागरिकता के भविष्य की दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं।

संसाधनों का असमान वितरण उच्च शिक्षा की असमान पहुंच, शोध परिणामों और शोध संस्थानों की असमानता के रुप में देखा जा सकता है। अत्यधिक प्रसन्न करने वाले वैज्ञानिक प्रकाशनों का अधिकतर हिस्सा अब भी उत्तर से निकलता है जो कि अधिकतम प्रस्तुतकर्ता और प्रतिष्ठित विश्वविद्यालयों और शोध संस्थानों का घर है। STEM (विज्ञान, तकनीकी, इन्जीनियरिंग और मेडीसन) के नाम से प्रसिद्ध संकाय जो कि प्रमुख लाभार्थी हैं के इस दौरान चीन, भारत, ब्राजील और अन्य देशों में प्रभावशाली तरीके से प्रकाशन में हिस्सेदारी बढनें से तस्वीर बदल रही है। नीति निर्माताओं के बीच समाज विज्ञान का महत्व, इसके द्वारा नई सामाजिक समस्याओं, जलवायु से लेकर मूलभूत सिद्धान्तों तक की मेजबानी करने के कारण, कम नहीं हुआ है। जबकि नये विचारों का व्यापक प्रभावशाली व्याख्यान क्षणभंगुर भविष्य पर सामुहिक शर्त से अधिक कुछ भी नहीं है, सामाजिक तकनीकी नवचार आवश्यक रुप से सामाजिक नवचारों के क्रमबद्ध विकास का प्रबन्धन करेंगे।

2. विषयात्मक और राष्ट्रीय सीमाओं से समाजशास्त्र की मुक्ति

समाजशास्त्र के शुरुआत की तुलना में विषयात्मक और राष्ट्रीय पहचान के महत्व और प्रमुखता में स्पष्ट रुप से गिरावट आई है। एक बार संकाय की स्थापना के लिए बनाए गये विधान अब जोखिम से दायित्व में बदलते जा रहे हैं। विज्ञान के संदर्भ में गतिशील आंतरिक बहुलता समावेशी जर्मन अवधारणा Wissenschaft की विशेषता है। नया ज्ञान अक्सर स्थापित विषयों के अन्तराफलक पर ही उभरता है। पद्धतियां, उपकरण और तकनीक अधिक रचनात्मक तरीके से सीमाओं को पार करती है। हालांकि विभाग आधारित विषयात्मक संरचनाऐं शक्तिशाली तरीके से हतोत्साहित करती हैं परन्तु अंतःविषय सहयोग के विस्तार अपरिवर्तनीय हैं।

कहने का तातपर्य यह नहीं है कि विषय की सीमाऐं पूरी तरह से अप्रासंगिक हो गयी हैं। एक विषयात्मक पहचान की स्थापना जिसमें कि विद्यार्थी घुलेमिले हुए हों में यह जानना महत्वपपूर्ण है कि एक दिलचस्प समाजिक समस्या के मूल तत्व क्या होते हैं। एक व्यापक भावना रहती है कि यह 'सामाजिक तत्व' एक नये शैक्षिणक प्रबन्धन जिसका उद्धेश्य विषय की कार्यकुशलता और जवाबदेही के मानदण्ड बनाना होता है के खिलाफ सुरक्षा का हकदार है। यह केवल पश्चिम की ही समस्या नहीं है।

>>

अधिकतर एंग्लो अमेरिकन विश्वविद्यालयों में सफलता के नये व्यापारिक माडॅल और उनकी शेष विश्व में नकल को देखते हुए विषय की सीमाऐं हर कहीं प्रबन्धकीय पकड़ में हैं।

समाजशास्त्र सबसे अधिक रचनात्मक और विध्वंसक सिद्ध हुआ है जबकि वह दूसरे विषयों के क्षेत्रों मे फैलता है और जोर देता है कि मानवीय प्रतिनिधित्व और समाज को इसकी विस्मयकारी बहुलता के साथ वापस लाया जा सके। हालांकि समाजशास्त्र राष्ट्र–राज्य की छाया मे पला बढ़ा है और सामाजिक हालात और क्षेत्रीय दावों को परस्पर जोड़ता है। आज के परिप्रेक्ष्य में प्रत्येक राष्ट्रीय समाजशास्त्र ने अपने आप को अपरिहार्य रुप से विभिन्न संस्थागत व्यवस्थाओं और राजनैतिक, आर्थिक और सांस्कृतिक आकार के संदर्भ में बहुलता के ज्ञान के पारिस्थितिकी तन्त्र के हिस्से के रुप मे ही उद्घाटित किया है।

अपने स्वनिर्मित कार्यक्षेत्र के विरुद्ध कार्य करते हुए, समाजशास्त्र को विषय और राष्ट्र की सीमाओं से मुक्त होने के प्रयास जारी रखने चाहियें। यह देखना बाकी है कि अपनी कार्यप्रणाली को बहुलतावादी और वैश्विकीकृत करते हुए क्या समाजशास्त्र एक 'उत्तरविषय' बनने को तैयार है? एतिहासिक दृष्टि से, इसे वर्गीकृत क्रम से सामाजिक आन्दोलनों और तन्त्र की अपनी उभयभावी चुनौतियों और अभी तक खोजी जाने वाली संस्थाओं के अभाव के कारण विविधता के बहाव की तरफ चलना चाहिये।

3. वैकल्पिक ज्ञान का काल्पनिक असली स्वप्नलोक

एक ज्ञान स्वप्नलोक आवश्यक रुप से उन ज्ञानमीमांसात्मक मान्यताओं जिन्हे अपने स्वंय के ज्ञान उत्पादन के आधार की तरह बनाया जाना है से जुड़ा होना चाहिये। वास्तविक ज्ञान का वर्गीकरण जहां स्वपनलोक को चुनौतियाँ देता है उसे अवश्य ही स्थान मिलना चाहिये। ज्ञानोदय (Enlightment) की स्थायी विरासत में सभी धर्मों एवं राजनैतिक अधिकारीयों का प्रबल विरोध है और इसका गहरे तक पैठा हुआ सन्देहवाद तथा यह विश्वास कि सभी ज्ञान, वैज्ञानिक ज्ञान सहित, वस्तुतः अस्थाई हैं और जिसे कि दुनियां की विकसित और विस्तारित होती हुई मानव समझ स्थानापन्न करेगी।

सत्य ने अपने आप में और विशेषतौर पर बहुलता के सत्यों ने निरंतर विकास को स्वीकार किया है। इसी मुख्य कारण की वजह से ज्ञानोदय का विचार दृढ़ रह सका है और क्यों कोई ज्ञान उत्पादन के वैकल्पिक प्रकार इस स्वतःनवीनीकरण की शक्तिशाली प्रक्रिया के सामने खड़े रह पायेंगें।

कई अन्य संदर्भो में ज्ञानोदय को पुर्नविचार और यहां तक कि पुर्नआविष्कार की आवश्यकता है (Aboagora)। इसको अब अपनी भावनाओ (नैतिक भावनाओं सहित),

> **"ज्ञानोदय को पुर्नविचार और यहां तक की पुर्नआविष्कार की आवश्यकता है"**

कारण और तर्कसंगतता के मध्य काल्पनिक स्वायत्त व्यक्ति और सामूहिक बहुलता के परिवर्तनशील सम्बन्धों और स्वनिर्मित विरोधाभासों से निपटना ही होगा। प्रकृति और कृत्रिमता के मध्य अतर्कसंगत द्विभाजन को अब दुबारा से देखना होगा। वैश्विक प्रासंगिकतावाद के विचार को गले लगाने के बजाय इसे सार्वभौमिकता की असत्यता को स्वीकार करना ही होगा।

इसीलिए 'यूरोप का प्रान्तीयकरण' (Provencializing Europe) (Dipesh Chakrabarty) या 'एनादर नोलेज इज पासीबल' (De Sousa Santos) जैसी परियोजनाओं का दावा है कि उत्तरावर्ती ज्ञानमीमांसाओं से आगे बढने तथा ज्ञानमीमांसात्मक विविधता को मान्यता देने की मांग करती हैं। ऐसे वास्तविक ज्ञान के कल्पनालोक संभव हैं क्योंकि उनकी काल्पनिकता को मानवीय गरिमा, सामुहिक न्याय और कामना करने की क्षमता (Arjun Appadurai) जैसे वैकल्पिक मानदण्डों के साथ पिरो दिया गया है या इसलिए कि वे उन गौण आन्दोलनों में शामिल हैं जहां उनके कल्पनालोक ने सापेक्षवाद के धोखे में अपने लंगर प्रलोभनों का विरोध करते हुए डाल दिये थे। उनहें अपने आप को ज्ञान उत्पादन के वर्तमान वर्गीकरण को स्वीकारना होगा चाहे वे नई तकनीक द्वारा वैश्विक शैक्षणिक अवसरों जो कि ज्ञान के एकाधिकार द्वारा प्रस्तुत तीव्रगामी परिवर्तनों से गुजर रहे हों और ज्ञान के सह–उत्पादन के उपागम हों। अभी तक मैं केवल रॉयल सोसाईटी के सोम्य निष्कर्ष से सहमत हो सकता हूं कि ''अंग्रेजी अभी भी शोध की प्रमुख भाषा बनी हुई है, और वैश्विक शोध समुदाय ऐसा लगता है कि मोटे तौर पर इसे स्वीकार करने के लिए तैयार है।'' ■

References

Aboagora (2011) http://www.aboagora.fi/

Allenby, Braden R. and Sarewitz, D. (2011) *The Techno-Human Condition*. Cambridge, Mass.: The MIT Press.

Chakrabarty, D. (2007) *Provincializing Europe: Post-colonial Thought and Historical Difference*. Princeton: Princeton University Press.

De Sousa Santos, B., ed. (2007)*Another Knowledge is Possible: Beyond Northern Epistemologies*. London-New York: Verso.

Nowotny, H., P. Scott, and M. Gibbons. (2001) *Re-Thinking Science: Knowledge and the Public in anAge of Uncertainty*. Oxford: Polity Press.

Nowotny, H. (2006) "The Potential of Transdisciplinarity", http://www.interdisciplines.org/

Nowotny, H. (2010) "Out of science – out of sync?" Pp.319-322 in *World Social Science Report*. Paris: UNESCO.

Pollock, S. (2008) "Disciplines,Areas, Postdisciplines." Paper presented at the Lisbon Conference on Curriculum Development in the Second Phase of the Bologna Process. Lisbon: Calouste Gulbenkian Foundation.

Royal Society (2011) *Knowledge, Networks and Nations: Global Scientific Collaboration in the 21st century*. London: Royal Society.

> युद्ध की समाप्ति का अभिप्राय शान्ति नहीं है

एलिस स्केजीपेनिकोवा, एलेक्जेण्डर वॉन हम्बोल्ट, पोस्ट डॉक्टरल रिसर्च फैलो, गोएथे विश्वविद्यालय, फ्रैंकफर्ट अम मेन, जर्मनी।

उजड़े हुए चेचन्या मे हिंसा की निरंन्तरता

विएना उपनगर के एक ठण्डे एवं अन्धेरे अपार्टमेण्ट में लूबा व्लाडोवस्काजा ने मुझे आमंत्रित किया। इन्होंने अनेक दिन एवं रातें ग्रोज्नी शहर के, जोकि चेचन्या की राजधानी है, अन्दर विद्यमान तहखानों एवं बम्बारी से बचाव के लिए बनाए गए सुरक्षागृहों में बिताई थीं। इसके उपरान्त इन्होंने अपने पुत्र को यह कहा कि वह उनके लिए एक ऐसा आवास/अपार्टमेण्ट तलाशे जिसमें बड़ी–बड़ी खिड़कियाँ हों। उन्हें बड़ी खिड़कियों वाला आवास मिल तो गया लेकिन वे खिड़कियाँ एक गन्दे कोटयार्ड/पिछवाड़े के सामने थीं। उन खिड़कियों के फ्रेम टूटे हुए थे जिसकी वजह से वह आवास और अधिक ठण्डा हो जाता था। व्लाडोवस्काजा दो कमरों के इस आवास में जिसकी कीमत बहुत अधिक थी अपने पुत्र एवं पति के साथ निवास करती थी। सन 2008 में पति–पत्नी को चेचन्या छोड़ने के लिए बाध्य किया गया और उन्हें ऑस्ट्रिया में निर्वासन के बाद रहने की अनुमति मिली। उनके दोनों पुत्र गैर–कानूनी बन्दी एवं उत्पीड़न के शिकार हुए और उसके कारण वह स्थान छोड़कर चले गए। यह कहानी इस तथ्य की संकेतक है कि चेचन्या में युद्ध की समाप्ति के बावजूद नागरिकों के लिए शान्ति एवं सापेक्षिक रूप से स्थायित्व प्राप्त नहीं हो सका है तथा यूरोपीय देश में निर्वासित जिन्दगी व्यतीत करने का कदापि अर्थ यह नहीं है कि वे सुरक्षित हैं और निर्भय होकर जीवन यापन कर सकते हैं।

पहला रूसी–चेचन युद्ध 17 वर्ष पूर्व प्रारम्भ हुआ था और युद्ध की स्थिति का द्वितीय चरण लगभग 12 वर्ष पूर्व प्रारम्भ हुआ था। सन्

> >

2002 में तत्कालीन राष्ट्रपति ब्लादिमिर पुतिन ने युद्ध की शुरूआत की थी इसके उपरान्त लगातार 2 वर्षों तक चेचन्या से आने वाले अधिकाँश रूसी नागरिकों को एक बहुत बड़े समूह के रूप में यूरोप में निर्वासित जिन्दगी व्यतीत करनी पड़ी। ऑस्ट्रिया ने रूसी नागरिकों के अधिकाँश प्रार्थना पत्रों को स्वीकार किया। रूस आज भी एक ऐसा देश है और उन तीन प्रमुख स्त्रोत देशों में से एक है जिसके नागरिक यूरोपियन यूनियन में निर्वासित जीवन यापन कर रहे हैं। उत्तरी काकेशस की जनता के प्रार्थना पत्रों को अस्वीकृत करने की संख्या में वृद्धि के बावजूद यूरोप में चारों तरफ विस्थापन से उत्पन्न हो रही संघर्ष की सी स्थितियां जारी हैं। 2000 के दशक में इस देश का प्रशासन मास्को समर्थक चेचन्स के हवाले कर दिया गया जिसे संघर्ष का चेचनाइजेशन भी कहा जाता है। इन्हें अपने आप आतंक विरोधी प्रचार का संचालन भी करना था। मास्को के प्रबल समर्थन के कारण चेचन जनसंख्या को यह आधार मिल गया कि वे देश का संचालन कर सकें अतः रूसी फेडरेशन का हिस्सा होने के बावजूद चेचन्या में आपराधिक नियमों की एक समानान्तर प्रणाली है। कुछ ऐसे भी अलिखित नियम हैं जो साक्ष्यों एवं उत्पीड़न के खण्डन हेतु प्रयुक्त होते हैं। सैकड़ों की जनसंख्या में लोग इन नियमों का शिकार होकर खामियाजा भुगत रहे हैं। स्थानीय प्रशासकों के पास अपराध की जाँच का एक विशिष्ट तरीका है। सबसे पहले ये प्रशासक सम्भावित अपराधियों को रेखांकित कर लेते हैं और उसके बाद साक्ष्यों को एकत्रित किया जाता है, तत्पश्चात् आपराधिक कानून के अन्तर्गत उनके विरूद्ध कार्यवाही होती है। साक्ष्य ज्यादातर अनुमानों पर आधारित होते हैं और उन्हें प्रमाण के रूप में स्थापित करने के लिए उत्पीड़न का सहारा लिया जाता है। लेकिन एक ऐसे परिवेश में जहाँ आपराधिक न्याय व्यवस्था में अधिकाँश प्रतिनिधि मास्को समर्थित शासन का हिस्सा हैं उपरोक्त प्रणाली प्रभावी ढंग से पुराने आपराधिक या अन्य प्रकृति की घटनाओं को जाँचने के लिए प्रयुक्त की जाती है। अपने आप को कैरियर की प्रक्रिया में उच्च स्तर पर ले जाने के लिए यह सब कुछ इस्लामिक आतंकवाद के विरूद्ध संघर्ष के नाम पर किया जा रहा है।

लूबा के पुत्र मिखाइल ब्लादोविस्की को दो साल तक जेल में रखने के बाद सन् 2005 में छोड़ा गया। उन्हें इस आरोप के अन्तर्गत कारागार में रखा गया कि वे सैन्य समूह के सदस्यों की कारों को बम से उड़ा रहे थे। लूबा का पुत्र यह कार्य एक अन्य व्यक्ति के साथ मिलकर कर रहा था। इस अपराध में उसे ये सजा सुनाई गई। वास्तव में लूबा का पुत्र उस अन्य व्यक्ति से पहली बार गिरफ्तार होने के उपरान्त ग्रोज्नी स्थित जिला पुलिस कार्यालय में मिला था। इस कार्यालय में दोनों को यातनाएं दी गईं। यह घटना अत्यन्त विशिष्ट थी परन्तु लूबा के पुत्र का छोड़ा जाना एक आश्चर्य था। सर्वोच्च न्यायालय के इस विशिष्ट निर्णय पर मानव अधिकार के लिए संघर्ष करने वाले दो महत्वपूर्ण लोगों अन्ना पोलितकोवस्काया एवं नतालिया एस्तीमेरोवा ने लेख लिखे (बाद में इन दोनों को मार दिया गया)। न्यायाधीश ने साक्ष्यों को गहनता से जाँचने के उपरान्त यह निर्णय लिया और यह केस समाप्त हो गया। मिखाइल जिसे अनेक चोटें दी गई थीं धीरे–धीरे स्वास्थ्य लाभ कर रहा था। न केवल उसे यातनाएं दी गईं अपितु उसके भाई को भी यातनाएं दी गई ताकि वह मिखाइल के विरूद्ध साक्ष्य प्रस्तुत कर सके। जेल जाने की दोबारा सम्भावनाओं को देखते हुए दोनों भाइयों ने देश को छोड़ दिया। सरकारी वकील के कार्यालय ने सफलतापूर्वक मिखाइल की रिहाई के विरूद्ध अपील की। इनके जाने के बाद लूबा अनवरत रूप से मिखाइल को निर्दोष सिद्ध करने का प्रयास करती रहीं और उसे दी गई यातनाओं के लिए न्याय की मांग करती रहीं। न्याय की यह माँग जल्दी ही खतरनाक हो गई। सैन्य बल के अनेक लोगों ने उनके घर लगातार आना प्रारम्भ किया और एक जाती हुई कार से उन्हें गोली से मारने का प्रयास किया गया। लूबा समझ गईं कि अब उपयुक्त समय आ गया है कि वे भी चली जाएं। चेचन्या में दो युद्धों के पश्चात बचते हुए यह सन्देश लोगों को मिल रहा था कि चेचन में स्थिति को सामान्य बनाया जा रहा है और यह अच्छा होगा कि वे देश से चली जाएं।

लूबा अपने नए घर में आ चुकी थीं और उन्हें अनेक प्रकार के रोग हो गए थे। चेचन्या में रहते हुए यह सम्भव नहीं था कि वो इन रोगों से लड़ सकें। उन्हें एक लम्बा समय अस्पतालों में गुजारना पड़ा परन्तु भय की स्थिति से वे अपने को मुक्त नहीं कर पा रही थीं। उनका मत था कि भय उनके व्यक्तित्व में इतनी गहराई तक प्रवेश कर चुका है कि वह इससे मुक्त नहीं हो सकतीं। फोन की घण्टी बजने पर लूबा काँपने लगती हैं। क्या इतना भयभीत होने का उनके पास कोई कारण है ? एक युवा चेचन व्यक्ति उमर इसराइलोव जिसे ऑस्ट्रिया में एक विस्थापित का पद प्रदान कर दिया गया था, को वियना में दिन–दहाड़े सड़क पर गोलियों से मार दिया गया। उसने औपचारिक रूप में रूस की सरकार पर यह आरोप लगाया था कि चेचन्या में अवैध रूप से बन्दी बनाए गए लोगों को यातनाएं दी जा रही हैं और उन्हें दण्डित किया जा रहा है और इस प्रकार की क्रियाओं में चेचन के वर्तमान राष्ट्रपति रमजान कैडिरोव की सहभागिता है। इसराइलोव को इस तरह से मारा गया कि न्यायालय के सम्मुख गवाह को प्रस्तुत न किया जा सके। यहाँ तक कि उपलब्ध एक गवाह को भी समाप्त कर दिया गया और प्रभावी ढंग से यह सन्देश दिया गया कि चेचन के विस्थापितों के साथ क्या किया जा सकता है। चेचन समुदाय में अविश्वास की स्थिति पनपी है। यह विश्वास किया जाता है कि कैडीरोव शासन में अनेक लोग यूरोप में रहते हुए तथा यूरोप में सक्रिय होते हुए सूचनादाता के रूप में काम कर रहे हैं। वे लोग जो लोगों को मारते हैं या जिन पर मारने के आरोप हैं, के साथ इस वर्ष ऑस्ट्रिया में कठोर दण्ड दिया गया परन्तु जो लोग आदेश देने के आरोपी हैं, या जिनकी सम्बद्धता है, की अभी जाँच बाकी है। कैडीरोव के संरक्षक के रूप में ब्लादिमिर पुतिन रूस के राष्ट्रपति पद की प्राप्ति आगामी वर्षों में करने के इच्छुक हैं। ऐसा लगता है कि चेचन्या में उत्पीड़न सम्भवतया जारी रहेगा। ■

> लैटिन अमेरिकन सोशियोलॉजिकल एसोशिऐशन का सम्मेलन: निर्णायक घोषणापत्र

रॉकेल सोसा एलीज़ागा, युनिवर्सिडाड नेसियोनाल आटोनोमा ड मैक्सिको तथा योकोहामा काँग्रेस 2014 के कार्यक्रम के लिए आई.एस.ए. उपाध्यक्ष

चिलि के विद्यार्थी सितम्बर 2011 में सम्पन्न लैटिन अमेरिकन सोशियोलॉजिकल एसोशिऐशन के सम्मेलन को अपना विरोध महसूस कराते हुए।

हाल ही में सितम्बर 6 से 10, 2011 तक ब्राजील के रेसिफ नगर में लैटिन अमेरिकन सोशियोलॉजिकल एसोशिऐशन का 28वाँ सम्मेलन सम्पन्न हुआ जिसमें 4578 लोगों ने भागीदारी की और 9716 विद्यार्थी, पेशेवर, शोधार्थी और अध्यापक पंजीकृत थे। रेसिफ के विश्वविद्यालय और अन्य ब्राजीलियन विश्वविद्यालयों के दर्जनों प्रोफेसरों, फैलो और विद्यार्थीयों ने एक अद्भुत सामुहिक प्रयत्न से सात प्रमुख भाषणों, नौ अनुकलनात्मक सत्रों, पच्चीस विषयात्मक सत्रों, बावन गोलमेज सम्मेलनों और तीस कार्याकारी समूहों का आयोजन किया। यह एक उर्जावान, क्रियाशील, समीक्षात्मक और आकर्षक समुदाय था जिसमें अधिकतर युवा थे जिसने हमारी वार्ताओं तथा सामान्य इच्छाओं को अर्थ प्रदान किया तथा हमारी एसोशिऐशन के अनुभवों के आधार पर उन प्रश्नों को जो हमने बनाए और उन शोध परिणामों को अब तक की हमारी एसोशिऐशन द्वारा अनुभव की गई सबसे अधिक प्रचण्ड सम्मेलन में प्रस्तुत किये।

हमारा क्षेत्र एक विरोधाभासी क्षेत्र है। एक तरफ तो मैक्सिको की दुखान्तिका में 50,000 से ज्यादा पीडितों को तत्काल न्याय दिलाने की मांग और जिसे हम जातिसंहार कह सकते हैं को रोकने की आवश्यकता है वहीं दूसरी तरफ विनाश से उपजे हुए दर्द तथा हैती के पुनःनिर्माण

>>

की कछुआ चाल और जातिसंहार के अपराधियों की ग्वाटेमाला में पुनःस्थापना की चुनौतियां, होंण्डुरास में नये तानाशाहों द्वारा हजारों नागरिकों की इच्छा को बदलना, तथा क्यूबा, कोलम्बिया और प्युिअर्टो रिको मे विदेशी फौजी अड्डों का अस्तित्व में रहना है। दूसरी तरफ हमारे पास उदाहरण हैं कि किस प्रकार हमारे लोगों ने विकल्प बनाए हैं जो दर्शाते हैं कि हमारे पास उन कठिनाइयों का सामना करने योग्य बुद्धि और सामर्थ्य है जो हमारे रास्ते में आती हैं। ब्राजील, इक्वेडर, बोलिविया, वेनेजुएला, उरुग्वे, पेराग्वे, अर्जेन्टीना, क्यूबा और निसन्देह हाल ही में पेरु ने हमारी जनता की आशाओं को एक दिशा दी है, गहन समस्या को पहचान कर हमारे महान क्षेत्र के लाखों मानवों को एक दिशासूचक भविष्य प्रदान किया है।

लैटिन अमेरिका विश्व का सबसे अधिक असमान क्षेत्र है। हिंसा से 1,40,000 से अधिक मनुष्यों की जान प्रतिवर्ष जाती है, 30 प्रतिशत से अधिक आबादी गरीबी से प्रभावित है और 8 प्रतिशत से अधिक

लैटिन अमेरिकन सोशियोलाजिकल एसोसिएशन के निवाचित अध्यक्ष, पाओलो हैनरिक मार्टिन्स, सितम्बर 2011 मे रेसिफ कॉंग्रस को सम्बोधित करते हुए

अशिक्षित है। हमने अपने विश्वविद्यालयों और शिक्षण संस्थानों को विशेषाधिकृत स्थितियों में बने रहनें से रोकने के लिए पर्याप्त कदम नहीं उठाए जबकि हजारों मनुष्य जिन्दा रहनें की आधारभूत आवश्यकताओं की पूर्ती में अक्षम हैं। इससे भी अधिक, हम अपने विश्वविद्यालयों को धीरे–धीरे या अक्समात ही विशिष्ठीकरण और व्यवसायिकता के केन्द्र बनने से नहीं रोक पाये जहां कि विद्यार्थियों और संकाय शिक्षकों को अपनी सांस्कृतिक और राजनैतिक जीवन की निकटता से विरक्त कर दिया जाता है, यहां हम महान आर्थिक भंगुरता के संदर्भ की बात नहीं कर रहे हैं।

तथापि जो कुछ चिली में हुआ वह उत्साहजनक था कि नवउदारवादी नीतियों के शुरुआती बिन्दु पर हमारे विश्वविद्यालयों में सार्वजनिक शिक्षा की रक्षा में एक मुक्तिवादी आन्दोलन उभर कर आया। जैसा चिली में हुआ, विद्यार्थियों और संकाय शिक्षकों के आन्दोलन की पुनरार्वति उरुग्वे, बोलिविया, ब्राजील और प्युिअर्टो रिको में भी सार्वजनिक विश्वविद्यालयों की रक्षा के लिए हुआ। अनेक शिक्षक और समाज विज्ञानी शिक्षा से प्रारम्भ करते हुए अपनी आवाज हमारी प्रभुसत्ता और हमारे सार्वजनिक जीवन के मामलों को तय करने सम्बन्धी हमारे अधिकारों की मांग के लिए उठा रहे हैं। इस संघर्ष से हम हमारी वर्तमान और आने वाली पीढ़ीयों की विरासत के लिए महत्वपूर्ण समझ विकसित करने के लिए प्रतिबद्ध हैं। इस प्रकार हम रेसिफ के संघीय विश्वविद्यालय में लैटिन अमेरीकन सर्वेक्षण संस्थान (Instituto de Pesquisas Latinoamericanas) के निर्माण को सलाम करते है जो कि निःसन्देह क्षेत्रीय समाज विज्ञान सम्बन्धी चर्चाओं में अपना महत्वपूर्ण योगदान देगा।

हममें से जो यहां उपस्थित हैं वे दृढता पूर्वक हमारे साथियों जिन्होंने इस संघ का निर्माण किया है के द्वारा निश्चित किये गये रास्ते पर चलने की हमारी वचनबद्धता की पुष्ठि करेंगें : रुई माउरो मारिनि, औक्टावियो इयानि, फ्लोरेस्टन फर्नान्डेज, आगस्टिन क्युएवा, रेने जॉवालेटा, एड्युआर्डो रुइज कोन्टार्डो, लूसिया साला। कई अन्य लोगों के अलावा हम उन हजारों बहादुर साथियों की स्मृति और सम्मान करते हैं जिन्होने आतंक को मात दी, जिन्होनें हमारे अमेरिका में यौनउत्पीडन, नस्लवाद, असहिष्णुता और जातिसंहार का सामना किया है। हमारे लोग हर प्रकार की प्रतिकूल परिस्थितियों का सामना करते हैं जो उन्हे गरिमा, शक्ति और रचनात्मकता के साथ जीवित रहने से धमकाती हैं। हमारी समस्त कल्पनाशीलता तथा अविचल इच्छा शक्ति के साथ हम अपनी भूमिका अंतरिक्ष को जीतने के उस स्वपन को जो टाओसेन्ट लुर्वेचर, हिडाल्गो और मोरेलोस, बोलिवर, आर्टिगस, ओ'हिजिन्स और सान मार्टिन, जो मार्टी, बेनिटो जुआरेज, सेन्डिनों, फैराबुन्डो मार्टी, चे गुवेरा, तथा सेल्वाडोर एलेन्डे ने देखा था, को निभाऐंगें। ''लैटिन अमेरिकन समाजशास्त्र अमर रहे! लैटिन अमेरिकन सोशियोलॉजिकल एसोशिऐशन अमर रहे!''

प्रोफेसर एलीजागा के लैटिन अमेरिकन सोशियोलॉजिकल एसोशिऐशन के रेसिफ सम्मेलन में प्रस्तुत ''निर्णायक घोषणापत्र'' को जनरल एसेम्बली में एकमत से स्वीकार किया गया। ■

> अशांत समय के लिए समाजशास्त्र : यूरोपियन समाजशास्त्रीय एसोसिऐशन में दिया गया भाषण

एनालिया टोरेस, युनिवर्सिडाडे टेक्निका ड लिस्बोआ, यूरोपियन समाजशास्त्रीय एसोसिऐशन की अध्यक्ष, 2009–2011

सितम्बर 9, 2011 को जिनेवा में यूरोपियन समाजशास्त्रीय एसोसिऐशन की कॉग्रेस के अवसर पर कारे रोग सी (Carre Rouge Cie) द्वारा जैनीफर अथवा द रोटेशन आफ द फ्लाईट अटेन्डेन्टस – नामक नाटकीय प्रस्तुति।

यूरोपियन समाजशास्त्रीय एसोसिऐशन का 10वां सम्मेलन जो कि जिनेवा मे 7 से 10 सितम्बर 2011 तक आयोजित किया गया था का मुख्य विषय अशांत समय में सामाजिक सम्बन्ध निशाने पर लगता है। अवश्य ही अशांति हर एक दिन की सच्चाई है, विशेष रुप से 2011 की शुरुआत के बाद से।

यूरोप में आर्थिक स्तर पर हम जो कुछ भी देख रहे हैं उसे मैं वित्तिय युद्ध कहने का साहस कर सकती हूँ। बीसवीं सदी में हमने दो विध्वंसकारी युद्ध और एक शीत युद्ध झेला हैं ; इक्कीसवीं सदी में हम आर्थिक और वित्तिय युद्ध झेल रहे हैं। वित्तिय बाजारों और

> >

रेटिंग एजेन्सियों के दबाव किसी सैनिक आक्रमण की तरह लगते हैं जो कि देश के बाद देश को प्रभावित करते हुए निसन्देह अधिकतम कमजोर अर्थवयवस्थाओं से शुरु हए हैं और यूरो पर हमला कर रहे हैं। नवउदारवादी वैश्विक प्रभुता प्रत्येक क्षेत्र पर चढ़ाई कर रही है, बाजारों से राज्यों और विश्वविद्यालयों तक को अपने तर्कों से प्रभावित कर रही है। इसी के साथ संकट का प्रभाव सामाजिक स्तर पर हिंसक प्रर्दशनों और प्रति–प्रतिक्रियाओं को जन्म दे रहा है। इन सब को एक असाधारण वैचारिक घबराहट से जोडा जा रहा है। निजि हित जनता के पैसे से सहेजे जा रहे हैं जबकि सार्वजनिक व्यय को संकट के लिए दोषी ठहराया जाता है।

हम यहां कैसे पहुंचे? यह संकट जिसमें हम रह रहे है 1980 के दशक की शुरुआत के बाद की प्रवृति का पूर्वाभासी तार्किक परिणाम लगता है। यूरोपीय समाजशास्त्री लंबे समय से राजनैतिक, आर्थिक और वित्तिय विकास के नकारात्मक प्रभावों, जिनके कारण हम यहां तक पहुचे हैं पर जोर देते रहे हैं। तीन समानान्तर प्रवृतियों को पहचाना जा सकता है जो कि इस विरोधाभासी संकट में कभी आपस में लिपटी हुई या कभी एक सहअस्तित्व वाली लगती हैं।

पहली प्रवृति वित्तिय और आर्थिक है। वैश्विक वित्त और इसकी असाधारण गतिशीलता ने क्षेत्र और राष्ट्र–राज्य के गठबन्धन लिखे। पिछले 20 वर्षों में बहुराष्ट्रीय निगमों की ताकत और उनके सस्ते श्रम के नए श्रोतों की पहुच ने यूरापीय देशों पर सबसे अधिक दबाव डाला है। इन दबावों ने विखंडन और विघटन की प्रक्रियाओं को 1990 के पूरे दशक में धकेला है। इसी के साथ पूंजी की वित्तिय गतिशीलता राज्य को इसे नियंत्रित तथा नियमित करने में असहाय बना देती है। आर्थिक मंदी और लोक कल्याणकारी राज्य का संकट इन प्रक्रिओं के स्वाभाविक परिणाम हैं। समाजशास्त्रियों के लिए यह अनुमान लगाना मुश्किल नहीं था कि अपवर्जन और आर्थिक अभाव की दशा में संघर्ष को उत्पन्न होना ही था। यह वास्तव में यही है जो कि हम देख रहे हैं गंभीर संघर्ष, सहज विरोध और हिंसक दंगें।

दूसरी प्रवृति राजनैतिक स्तर पर स्थान ग्रहण करती है। यूरोपीय संघ का निर्माण पहले से ही विघटन की विरोधाभासी ताकतों का संकेत था। मानवाधिकारों की रक्षा करने, राष्ट्रवाद या अन्य किसी भी वाद से लडने के लिए, राष्ट्रीय वर्चस्व के विचारों को नीचा दिखाने के लिए और मानदण्डों की स्थापना के लिए यूरोपिय संध एक महत्वपूर्ण प्रयास था। इसके अलावा, ये राजनैतिक मानदण्ड और प्रयास किन्ही प्राचीन परम्पराओं, धार्मिक या अन्य से पोषित नहीं थे, वरन् द्वितिय विश्वयुद्ध और इसकी विध्वंश के सबक थे। यद्यपि यूरोपिय संध के निर्माण के बाद जो प्रवृति जीतती हुइ दिख रही थी और यूरोपिय आयोग पर आदेशात्मक ताकत हो रही थी वह नवउदारवाद का अविनियमन का नुस्खा थी। हितों के गठबन्धन और राजनैतिक विचारों एवं इसके सामाजिक सरोकारों को जिन्होनें यूरोपिय संघ के स्थापकों को प्रेरित किया अब चलन में नहीं हैं।

एक तीसरी प्रवृति यूरोप और वैश्विक स्तर पर नागरिक समाज और सामाजिक राजनितिक कार्यक्रम सूची के बीच संयोजन है। कटौतियों और बेरोजगारी के खिलाफ, अनिश्चित नौकरियों और प्रचलित आव्रजन नीतियों के खिलाफ, और ग्रह की गिरावट के खिलाफ राजनैतिक और नागरिक कार्यवाहीयों के प्रति हम अत्यधिक जागरूक हैं। फिर भी यह स्पष्ट है कि नागरिक कर्ताओं और बहुराष्ट्रीय निगमों के शक्ति संतुलन में भारी अन्तर है। इसमें कोई आश्चर्य नही है कि स्पष्ट लक्ष्य के साथ संगठित कार्यवाही के मुकबले असाधारण असमानता के प्रति गुस्सा और प्रदर्शन अधिक विस्फोटक रहे हैं। वे हमें आद्योगीकरण के शुरुआती दौर के विद्रोहों और 'खतरनाक वर्गों' की याद दिलाते हैं।

समाजशास्त्रीयों और सामाजिक वैज्ञानिकों की महत्वपूर्ण भमिका सार्वजनिक नीतियों और यूरोपीय समाजिक मॉडल के निर्माण मे योगदान की रही है। लेकिन अब हमें इससे कहीं अधिक की आवश्यकता है। यह जरुरी है कि हम वर्तमान संकट के हमारे विश्लेशणों को परिष्कृत करें, हमारे कार्यक्षेत्र की अनभिज्ञता का चित्रण करें, और केवल एक उदाहरण देते हुए वित्तिय बाजारों के ब्लेक बाक्स को खोल कर देखें। यह जरुरी है कि हम हमारे परिणमों का प्रसार करें और उन पर सार्वजनिक रुप से चर्चा करें और नवउदारवादी पसंदों और नुस्खेां की भर्तसना करें। यह जरुरी है कि हम हमारे यूरोपीय प्रयासों को दुनियाभर में फैले हुए हमारे सहयोगियों से जोडें, वैश्विक समाजशास्त्र के निदानों का विकास करें और सार्वजनिक समाजशास्त्र की रणनितियों का उपयोग करें जैसा कि माइकल बुरावे व अन्य लोग अंतर्राष्ट्रीय समाजशास्त्रीय समिति में कर रहे हैं। ■

> अलविदा, डेवोराह स्वागत, मोहम्मद

देवोरा कालेकिन इन्टरनेशनल सोशियोलोजी रिव्यू ऑफ बुक्स (I.S.R.B.) की संस्थापक संपादक अपने कार्यकाल की समाप्ति पर (2011 के अंत तक) अपने उत्तराधिकारी मोहम्मद बामेह को कार्यभार सौंप देंगी। जैनिफर प्लाट, आई एस.ए. उपाध्यक्ष, प्रकाशन, ने देवोरा के कार्यकाल में होने वाली उपलब्धितयों की प्रशंसा ई. मेल साक्षात्कार द्वारा की है।

इन्टरनेशनल सोशियोलोजी रिव्यू ऑफ बुक्स के नए संपादक मोहम्मद बामेह।

अलविदा देवोरा.....

जे. पी. : आपको आई.एस.आर.बी. (I.S.R.B.) को विकसित करने का विचार कैसे आया?

डी. के. : पुस्तक समीक्षा को समर्पित आई. एस. ए. प्रकाशन का विचार मेरे से पूर्व उपाध्यक्ष, प्रकाशन सूजन मेक डेनियल द्वारा सुझाया गया था। उन्हें इसकी प्रेरणा ए. एस. ए. की लोकप्रिय शोध पत्रिका कन्टेम्पररी सोशियोलोजी से मिली। उस समय इण्टरनेशनल सोशियोलोजी वर्ष में चार बार ही प्रकाशित होता था और उसके पुस्तक समीक्षा के खण्ड (जिसे तुम सम्पादित करती थीं) को दो अन्य अंकों के लिए बढ़ाना तभी समर्थनीय था जब उसमें वह सूचनाएँ दी जाती जो कहीं ओर से प्राप्त नहीं हो सकती थीं। मैं तब प्रकाशन समिति की सदस्य थी और मेरी इच्छा को देखते हुए सूजन ने मुझे प्रस्ताव देने को कहा।

मैंने तब लिखा कि ''पुस्तक समीक्षा को समर्पित आई. एस. ए. शोध पत्रिका की शुरूआत समाजशास्त्रीय कल्पना को पुनः जागृत करने के किसी प्रयास से कम नहीं हैं। (.....) आर्थिक भूमण्डलीकरण के विकास के लाभ के बारे में संशय होने के बावजूद, एक विज्ञान के रूप में समाजशास्त्र को 'वैश्विक' बनना ही होगा। वृहद रूप से भिन्न राजनैतिक, आर्थिक एवं ऐतिहासिक परिस्थतियों में सामाजिक प्रक्रियाएँ कैसे विस्तारित होती हैं यह उस दुनिया में एक ज्वलंत सैद्धान्ति एवं व्यावहारिक मुद्दा है जहाँ शक्तियों, माल व तकनीकों की मुक्त आवाजाही साधारण बात है।

प्रस्तावित शोध पत्रिका (.....) पेशेवर सहयोगियों की गहन अन्तर्दृष्टि द्वारा विषय को समृद्ध बनाने का प्रतिनिधित्व करेगी। यह अन्तर्दृष्टि समाज में विशिष्ट अनुभवों से विकसित होगी। (यह) एक आवश्यक सेवा भी उपलब्ध करायेगी जिसमें विभिन्न समाजशास्त्रीय विचार जो कि साधारणतया उपलब्ध न हो के संकलन, व्यवस्थापन और प्रबंधन के लिए मंच उपलब्ध हो।''

योजना की शुरूआत नाम के साथ हुई। मुझे आशा थी कि रिव्यू ऑफ बुक्स नाम उपयुक्त होगा। एक अंक से दूसरे अंक में बदलने, समीक्षा निबन्ध, साक्षात्कार, पुस्तक समीक्षा खण्ड के शीर्षक का सम्बन्ध विषयगत ढाँचे के साथ विविधता प्रदान करने की मेरी धुन के साथ था। मेरा यह मानना है कि संपादक का कार्य इस बात को सुनिश्चित करना है कि प्रकाशित समीक्षाएँ जितना संभव हो अंग्रेजी दुनिया (एंग्लो सैक्सन) से बाहर की हों; और अंग्रेजी के अलावा अन्य भाषाओं में भी समीक्षा हो। समीक्षा निबंधों को समाजशास्त्र में महत्वपूर्ण रूझान को संक्षेप में प्रस्तुत करने के अवसर के रूप में कल्पित किया गया था। मेरी योजना, प्रत्येक अंक में तीन समीक्षा निबंधों : शास्त्रीय कृतियों पर पद्धतिशास्त्र में प्रकाशन पर और समाजशास्त्र के किसी भी एक उप क्षेत्र पर, प्रकाशित करने की थी। मुझे साक्षात्कार को सम्मिलित करने के अवसर से बहुत प्रसन्नता हुई क्योंकि मुझे उन्हें पढ़ने में बहुत आनंद आता है। समाजशास्त्र का अध्ययन करने वाले लोगों को शायद इस बात की जिज्ञासा होगी कि ये कृतियाँ कैसे लिखी गई, इस तर्क के साथ मैंने एक खण्ड ''लेखकों के शब्द'' (वर्डस फ्राम राइटर्स) की शुरूआत की। एक अन्य संपादकीय निर्णय 1500 शब्दों के साथ गहन समीक्षा की अनुमति और साथ ही महत्वपूर्ण प्रकाशन, जिनकी विशिष्ट अंक के समय समीक्षा नहीं की जा सकी, पर नजर रखना था।

जे. पी. : क्या आप संक्षेप में आई.एस.आर.बी. की उपलब्धियाँ बता सकती हैं?

डी. के. : हालाँकि, जितना अभी तक पूरा किया है उससे कहीं अधिक की योजना थीं, लेकिन मेरी समझ में आई.एस.आर.बी. (I.S.R.B.) का सर्वाधिक महत्वपूर्ण योगदान इस बात में है कि इसने पाठकों को विषयगत थीम और समकालीन विश्व में समाजशास्त्र का चरित्र चित्रण करने वाले वैध दृष्टिकोणों से परिचय कराया है। इसने भिन्न पीढ़ियों के समाजशास्त्रियों को एक मंच प्रदान किया है; जहाँ समीक्षा की गई पुस्तकों में युवा समाजशास्त्रियों के ग्रंथों ;जवउमेद्ध के साथ ही दिग्गजों

>>

की समकालीन शास्त्रीय कृतियाँ भी सम्मिलित हैं। मुझे इस बात की भी प्रसन्नता है कि समीक्षक एवं समीक्षा निबंधों के लेखक सभी महाद्वीपों से हैं और यहाँ तक कि शैक्षणिक संस्तरण के सभी स्तरों से हैं। कुछ हद तक आई.एस.आर.बी. ने भाषा के अवरोध को तोड़ने में योगदान दिया है। समीक्षा की गई पुस्तकों में अंग्रेजी के अलावा अन्य भाषाओं की पुस्तकें भी हैं और समय के साथ मैं अंग्रेजी के अलावा अन्य भाषाओं में समीक्षाएँ भी स्वीकार कर पाई।

जे. पी. : आप विशिष्ट उपलब्धियों के रूप में क्या देखती हैं?

डी. के. : मेरी सोच से कई उपलब्धियाँ हैं। सबसे पहले तो मैं उन सब लोगों की शुक्रगुजार हूँ जिन्होंने आई. एस.आर.बी. के साथ सहयोग किया और प्रत्येक अंक को समाजशास्त्रीय विचारों से समृद्ध संग्रह से परिपूर्ण किया। साक्षात्कार एक अलग उपलब्धि हैं। जगह की सीमा होने के कारण मुझे योजनाबद्ध प्रश्न पूछने पड़े। परन्तु प्रत्येक समाजशास्त्री, जिसके साथ मैंने बात की, ने विषस से सम्बन्धित ऐसे पक्षों के बारे में खुलासा किया जो कि केवल उनकी कृतियों को पढ़ने से प्राप्त नहीं होता। उनका जोश और व्यापक दृष्टि उनके प्रकाशनों में अक्सर चौकाने वाली अन्तर्दृष्टि जोड़ता है। मेरे विचार से यह भी महत्वपूर्ण है कि आई.एस.आर.बी. ने अपेक्षाकृत नये उपक्षेत्रों में पुस्तकों के प्रकाशन के साथ प्रासंगिक पुरानी कृतियों को भी स्थान दिया है।

जे. पी. : इसको लोगों ने किस तरह स्वीकारा?

डी. के. : जवाबदेही के वर्तमान माहौल में, इसका उत्तर इम्पेक्ट फैक्टर बताने से है। सौभाग्य या दुर्भाग्य से, जैसा आपका दृष्टिकोण हों, समीक्षाओं के इम्पेक्ट फैक्टर का गणन नहीं होता। ज्यादातर समीक्षाएँ प्रार्थित होती हैं और जहाँ आवश्यकता हो, संशोधन सम्पादक–समीक्षक के बीच परामर्श द्वारा किये जाते हैं और रेफरिंग समीक्षा निबंधों के अलावा अन्य के लिए अर्थहीन है। अतः शायद हम इसे इन्टरनेशनल सोशियोलोजी की प्रतिष्ठा से आंक सकते हैं। SAGE के आँकड़ों के अनुसार, पिछले 5–6 सालों में इसके इम्पैक्टर फैक्टर में लगातार वृद्धि हो रही है। मैं आशा करती हूँ कि आई.एस.आर.बी. ने भी इस रिकॉर्ड में कुछ योगदान दिया होगा (चाहे छदम् रूप में)। इसके अलावा सहयोगियों ने अनुकूल टिप्पणियाँ की हैं और मैं यह मानना चाहूँगी कि वे नेकनीयत हैं।

जे. पी. : आपको सबसे अधिक परेशानी कहाँ आई?

डी. के. : हाल ही में कन्टेम्परारी सोशियोलोजी के संपादक ऐलन सिका ने ई. मेल में लिखा कि हर कोई समीक्षा पढ़ना चाहता है और कोई उन्हें लिखना नहीं चाहता। आशा करती हूं कि उनके कथन का पहला हिस्सा आई.एस.आर.बी. पर लागू होता है परन्तु निस्संदेह दूसरा हिस्सा बिल्कुल सही प्रतीत होता है। समीक्षा के प्रकाशन के लिए उत्तरदायी संपादक की सबसे बड़ी समस्या समीक्षा प्रार्थित करने की है। समीक्षा के लिए पुस्तकें ऑफिस में सतत् रूप से आती रहती हैं और उससे भी अधिक शीघ्र प्रकाशित होने वाली पुस्तकों की सूचनाएँ होती हैं। पुस्तकों की सूची एवं वर्णन में से हमारे अनुरूप पुस्तकों का चुनाव करना मजेदार है पर फिर समीक्षक ढूँढनें पड़ते हैं। आई.एस.ए. जैसे संगठन जिसमें 60 शोध समितियाँ हैं, उनमें से विशेषज्ञ राय देने वाले लोगों के नाम छाँटना कोई मुश्किल काम नहीं है। परन्तु इन विशेषज्ञों को इस बात के लिए राजी करना कि नई प्रकाशित पुस्तकों को न सिर्फ पढ़ना बल्कि उनके निष्कर्षों की समीक्षा के द्वारा अन्य सहयोगियों के साथ बाँटना अलग बात है। हालाँकि इस समस्या का समाधान भी हो जाता है पर यह परेशानी का विषय है।

एक अन्य समस्या जो मेरे सामने आती है वह अर्न्तवस्तु से सम्बन्धित है और वह मेरी संतुष्टि के लायक हल नहीं हुई है। मेरी योजना समाजशास्त्रीय दृश्य सामग्री के बारे में नियमित समीक्षा को सम्मिलित करने की थी। मगर और कुछ नहीं तो इस तरह की सामग्री और उनकी मात्रा में लगातार वृद्धि हो रही है। तथापि, मेरे संपादकीय काल के दौरान, मैं सामाजिक रूप से महत्वपूर्ण वृत्त चित्र और महत्वपूर्ण समाजशास्त्रियों के साथ भेंट के वीडियों रिकार्ड पर मुट्ठी भर लेख ही प्रार्थित कर पाई।

जे. पी. : क्या अपने उत्तराधिकारी के लिए कोई विशेष संदेश हैं?

डी. के. : आई.एस.आर.बी. की शुरूआत से लेकर अब तक के वर्ष एक साहसिक यात्रा एवं सीखने के अवसर के रूप में रहे हैं। इस बात को कहने के अलावा मैं और कुछ कहने की हिमाकत नहीं कर सकती। मुझे बड़ा गर्व है कि मैं संपादक का स्थान एक विशिष्ट विद्वान को सौंप रही हूँ और मोहम्मद बामेह को आई.एस. आर.बी. को और विस्तृत फैलाने के लिए शुभकामनाएँ देती हूँ।

...स्वागत मोहम्मद,

आई.एस.आर.बी. के नये संपादक, मोहम्मद बामेह, पिट्सबर्ग विश्वविद्यालय, अमेरिका में समाजशास्त्र के प्रोफेसर हैं। उन्होंने अपने कैरियर में सर्वाधिक समय इस्लामिक अध्यन, राजनैतिक एवं सांस्कृतिक भूमण्डलीकरण, नागरिक समाज एवं सामाजिक आंदोलन और तुलनात्मक सामाजिक एवं राजनैतिक सिद्धान्त के शिक्षण एवं शोध पर व्यतीत किया है। अधिक जानकारी के लिए उनकी वेबसाईट देखें :

www.sociology.pitt.edu/faculty/index.php?q=mohammed-bamyeh/view

वे देवोरा कालेकिन के कदमों पर चलने और आई.एस.आर.बी. की विशिष्ट पहचान को और बढ़ाने में योगदान देने को आतुर हैं। वे भावी समीक्षकों को कम जाने वाले परन्तु समाजशास्त्रीय चिन्तन के आशावान पक्षों पर लिखने के लिए आमंत्रित करते हैं। साथ ही में वे अंग्रेजी में अनुपलब्ध सामग्री या फिर जिसको अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर प्राप्त करना संभव न हो, के प्रकाशन पर विशेष जोर देते हैं।

ई–मेल के लिए संपर्क करें : mab205@pitt.edu ■